|| श्री जिनायनमः ||

तृतीय संस्करण की भूमिका

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की २००० प्रति एक सप्ताह में बिक गई और द्वितीय संस्करण की २५०० प्रतियाँ भी हाथों हाथ निकल गई। माँग इतनी अधिक रही कि हमें शीघ्रता से इसका तृतीय संस्करण छपाना पड़ा। यह प्रसन्नता की बात है कि इस पुस्तक का सदुपयोग कर बहुत से भाइयों ने व्रत धारण किया है। पर कई लोगों का खयाल है कि व्रतधारी श्रावक बन जाने से व्यापार आदि संसार का कोई भी काम नहीं कर सकेंगे और एक तरह के झंझट में फंस जायँगे। परन्तु उनका ऐसा सोचना व्यर्थ और भ्रम मूलक है। श्रावक के पचक्खाण (प्रत्याख्यान) प्रेम के पचक्खाण हैं। जिसकी जितनी शक्ति हो वह उसी के अनुसार व्रत ग्रहण कर सकता है। परन्तु लिये हुए व्रतों पर मेरु पर्वत की तरह अडिग रहना प्रत्येक व्रतधारी श्रावक का मुख्य कर्तव्य है। कष्ट या आपत्तिकाल के समय तो और भी अधिक दृढ़ता की आवश्यकता है। वह तो व्रतधारी के परीक्षा का समय है। थोड़े से कष्ट से विचलित होकर व्रत की व्याख्या को ढीली कर देना या व्रत में दोष लगा लेना अथवा व्रत भङ्ग कर देना कभी उचित नहीं। व्रत लेने के पूर्व अपनी शक्ति को तोलकर इस प्रकार का व्रत लेना चाहिये ताकि उसमें दोष लगना संभव न हो। परन्तु व्रत ले चुकने पर उसे प्राण प्रण से निभाना ही उत्तम पुरुषों का कार्य है। इतना होने पर भी यदि कभी किसी व्रत में भूल से दोष लग जाय तो उसका गुरु-सम्मुख प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाना चाहिये। किन्तु यह कभी नहीं सोचना चाहिये कि व्रत तो टूट ही गया, अब

में स्वच्छंद भी विचरूं तो क्या हानि है ? हाँ, जान बूझकर किसी व्रत में यह सोचकर दोष लगाना कि पीछे प्रायश्चित्त ले लूँगा, उचित नहीं। भूल होना दूसरी बात है और जान कर दोष लगाना भिन्न बात।

किसी के व्रत भङ्ग की चर्चा अथवा किसी के व्रतों का अर्थ लगाना किसी दूसरे व्यक्ति को उचित नहीं। उसने किस आशय से व्रत लिया है और वह उसे किस प्रकार निभाता है इसका ठीक ठीक निर्णय उसकी आत्मा ही कर सकती है न कि दूसरा व्यक्ति। व्रत लेते समय यदि किसी बात का विशेष स्पष्टीकरण न हो सका हो तो पीछे कभी ऐसा प्रसंग उपस्थित होने पर उसका वही अर्थ अधिक अभीष्ट होना चाहिये जिससे व्रत की अधिक पुष्टि होती है। उदाहरण स्वरूप किसी ने आलू खाने का त्याग किया और उसने यह नहीं खोला कि हरा आलू या सूखा आलू। अब यदि उसका विचार सूखा आलू खाने का है तो इस विषय में वह अपनी आत्मा से ही निर्णय ले सकता है कि व्रत लेते समय उसका अभिप्राय किस प्रकार के आलू छोड़ने से था। यदि उसका विचार सिर्फ हरा आलू छोड़ने से ही था और अब यदि वह सूखा आलू खाता है तो व्रत में किसी प्रकार का दोष लगना तो संभव नहीं परन्तु अधिक अच्छा तो यह है कि वह हरा या सूखा किसी प्रकार का आलू न खावे। परन्तु इस संबंध में किसी दूसरे को पञ्चायत करने की आवश्यकता नहीं। सौ बात की एक बात है, मन से छिप कर चोरी नहीं होती।

संसार में जितने आमोद प्रमोद के साधन और खाने पीने की वस्तुएँ हैं उन सब का उपयोग कोई नहीं कर सकता और इन्हीं में आसक्त रहने वालों को सच्चा सुख भी नहीं मिलता। इन सर्व साधनों को एक दिन छोड़ना पड़ता है। परन्तु स्वेच्छा से—वैराग्य से—इनका त्याग करने वाले विरले ही होते हैं। त्याग करने से आश्रव का निरोध न होकर संवर होता है और संवर से तृष्णा का नाश होकर समभावी

बनने का अभ्यास और क्रमशः सम्पूर्ण समभाव प्राप्त होने पर जीव को मोक्ष मिलती है।

अस्तु, व्रत बन्धन स्वरूप नहीं वल्कि वह स्वाधीनता का द्वार है। व्रत का वन्धन स्वीकार नहीं करने के कारण ही मनुष्य मोह के बन्धन में पड़ता है। व्रत का बन्धन स्वीकार कर लेने पर मनुष्य अनेक तरह के दुर्गुणों से बच जाता है।

कई मनुष्यों को व्रत या बन्धा के नाम से बहुत भय और चिढ़ सी होती है। वे कहते हैं यावज्जीवन (जीवनपर्यन्त) व्रत के बन्धन में पड़ना बड़ी भारी मूर्खता है और हम बिना व्रत लिये ही इन बातों को इसी प्रकार निभायेंगे। परन्तु ऐसा वही व्यक्ति सोच सकता है जिनको व्रत के वास्तविक मूल्य का पता नहीं और जिनको अपनी आत्मा पर भरोसा नहीं। कारण जो चीज छोड़ देने लायक है उसे सर्वथा (जीवनपर्यन्त) छोड़ देने से भला हानि क्योंकर हो सकती है? इसीलिये हम जब कभी किसी वस्तु के त्याग करने की चेष्टा भर करते हैं पर व्रत नहीं लेते, तब यही समझना चाहिये कि उस वस्तु को त्याग करने की आवश्यकता के सम्बन्ध में हमारी दृष्टि स्वच्छ और स्पष्ट नहीं है। प्रतिज्ञा-स्वरूप उस बात को निभाने को कहना पर व्रत के बन्धन में नहीं पड़ने का अर्थ आन्तरिक दुर्बलता और उस वस्तु के भोग के सम्बन्ध में सूक्ष्म इच्छा को ही प्रकट करना है। जब किसी वस्तु के विषय में सम्पूर्ण रूप से वैराग्य उत्पन्न हो जाता है तब व्रत ग्रहण करना अनिवार्य हो जाता है।

उस संसार की परिकल्पना मात्र से ही हृदय कितना प्रफुल्लित होता है जबकि मनुष्य जैन सिद्धान्तानुसार श्रावक श्राविका गुण के धारक होकर अपने परिवार, सामज, देश, राष्ट्र व विश्व को अपूर्व शान्तिप्रद और सुखमय बनायेंगे।

व्रतधारी श्रावक ऐसा होना चाहिये कि उसकी शत्रु भी प्रतीति करे—विश्वास करे। त्याग प्रत्याख्यान का भाव लोक-दिखाऊ नहीं वल्कि सच्चे भाव से होना चाहिये। व्रतधारी श्रावक अपने वर्ताव से अपने चरित्र से प्रशंसा का पात्र बने, सब कोई उसे प्रेम, श्रद्धा व आदर की दृष्टि से देखे, ऐसा होना चाहिये। कपटाचरण उसमें नहीं रहना चाहिये। पर-निन्दा, पर-चुगली आदि दुर्गुणों से दूर रह कर अपने दैनिक व्यवहार में व्यावहारिक पटुता, विनय, विवेक सरलता आदि सद्गुणों के साथ अतिशीघ्रता और दीर्घसूत्रता से दूर रहना चाहिये। व्यापार में क्या, पारिवारिक व्यवहार में क्या, सामाजिक कार्य में क्या, राजसकाश में क्या सर्वत्र व्रतधारी श्रावक विश्वास का पात्र बने और उसका आचरण आदर्श हो ऐसा तभी सम्भव होगा जब अपने धार्मिक सिद्धांतों का पालन थोड़े से थोड़ा भी सच्चे भाव से कर सकेंगे। समय बड़ा अमूल्य है। गया समय फिर हाथ नहीं आता अतः शुभ काम में देरी नहीं करनी चाहिये।

प्राक्कथन

श्री अर्हंत भगवंत प्ररूपित जैन धर्म में संसार-त्यागी साधु व संसारी गृहस्थ के लिये क्रमशः पाँच महाव्रत व बारह श्रावक व्रत आत्म कल्याण के प्रकृष्ट मार्ग बतलाये गये हैं। सब कोई संसार-त्यागी, पंच महाव्रत धारी साधु बन नहीं सकते, परन्तु सब चाहते हैं कि मुक्ति मार्ग में अग्रसर हो आत्म कल्याण करें। इसलिये परम कारुणिक जिनेश्वर भगवान ने साधारण मनुष्य को पहले सम्यक्त्व धारी बनने को कहा है। मुक्ति सौध में पहुँचने के लिये जो चौदह सोपान (चौदह गुण स्थानक) बताये हैं, उनमें से सम्यक्त्व धारी (अव्रती समदृष्टि) चतुर्थ गुण स्थान पर है। सम्यक्त्व प्राप्ति होना व्यवहारिक भाषा में हुण्डी का स्वीकारा जाना है। सम्यक्त्व धारी निश्चय ही कोई-न-कोई दिन मुक्ति पावेगा, यह जैनागम का रहस्य-वचन है।

सम्यक्त्व प्राप्ति के लिये तीन बातें अवश्य समझनी व श्रद्धा पूर्वक अंगीकार करनी पड़ती हैं। अरिहंत वीतराग सर्वज्ञ को देव समझना, पंच महाव्रत धारी शुद्ध साधु को गुरु समझना व केवली भगवान प्रदर्शित तत्व को ही धर्म समझना। देव गुरु व धर्म यह तीन तत्व ठीक-ठीक समझे व सरधे बिना सम्यक्त्व प्राप्ति नहीं होती। श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी मत के प्रवर्तक प्रातः स्मरणीय श्री श्री १००८ श्री भिखणजी स्वामी ने इस सम्यक्त्व पर जो सरस और सरल शब्दों में ढाल बनाई है वह प्रत्येक श्रावक श्राविका के हृदय में ग्रथित होने लायक समझ कर उसके अनुसार वर्ताव करना हर श्रावक श्राविका का जरूरी कर्त्तव्य है। वह ढाल नीचे दी जाती है :—

दृढ़ समकित घर थोड़ला, समकित बिन शिव दूर ॥ भवियण ॥
भव्य जीवाँ तुमे साँभलो, पामे विरला शूर ॥ १ ॥
दृढ़ समकित घर थोड़ला ॥ए आँकड़ी॥
समकित-समकित कर रह्या, मर्म न जाणे कोय ॥ भवियण ॥
जिण घट समकित परगमै, ते घट विरला होय ॥ भ० दृढ़ ॥ २ ॥
जिण घट समकित रूपियो ऊगियो सूरज सार ॥ भवियण ॥
तिण घट हुवो चाँदणों, दूर गयो अन्धकार ॥ भवियण ॥ दृढ़ ॥ ३ ॥
सर-सर कमल न नीपजै, वन-वन अगर न होय ॥ भवियण ॥
घर-घर सम्पत्ति न पामीयै, जन-जन पंडित न होय ॥ भ० ॥ दृ० ॥ ४ ॥
गिरिवर-गिरिवर गज नहीं, पोल-पोल नहीं प्रासाद ॥ भवियण ॥
कुसुम-कुसुम परिमल नहीं, फल-फल मधुर न स्वाद ॥ भ० ॥ दृ० ॥५॥
सबहि खान हीरा नहीं, चन्दन नहीं सब बाग ॥ भवियण ॥
रत्न राशि जिहाँ-तिहाँ नहीं, मणिधर नहीं सब नाग ॥ भ० ॥ दृ० ॥६॥
सबही पुरुष शूरा नहीं, सगला नहीं ब्रह्मचार ॥ भवियण ॥
नारी नहीं सर्व सुलक्षणी, विरला गुण-भंडार ॥ भ० ॥ दृ० ॥७॥
सगला गिर सुवर्णमय नहीं, नहीं किस्तूरी ठामोठाम ॥ भवियण ॥
सबही सीप मोती नहीं, केशर नहीं गामोगाम ॥ भ० ॥ दृढ़० ॥८॥
सबने लब्धि न ऊपजै, सगला मुक्ति न जात ॥ भवियण ॥
सगला सिंह न केशरी, साधु किहाँ-किहाँ जमात ॥ भ० ॥ दृ० ॥९॥
तीर्थङ्कर चक्रवर्त्तनी, पदवी बड़ी पिछाण ॥ भवियण ॥
सगला जीव पामै नहीं, तिम पिण समकित जाण ॥ भ० ॥ दृ० ॥१०॥
नवों ही पदारथ माँहिलो, ऊँधो सरधै जो एक ॥ भवियण ॥
तो ही मिथ्यात्वी मूलगो, भूला भरम अनेक ॥ भ० ॥ दृ० ॥११॥
दशों ही मिथ्यात्व माँहिलो, बाकी रहे कदा एक ॥ भवियण ॥
तोही गुण ठाणों पहलो कह्यो, समझो आण विवेक ॥ भ० ॥ दृ० ॥१२॥
नवतत्व ओलख्या बिना, पहरे साधुरो भेख ॥ भवियण ॥
समझ पड़े नहीं तेहने, भारी हुवै विशेख ॥ भ० ॥ दृढ़० ॥१३॥

लीधी टेक छाड़ै नहीं, कुड़ो करै पखपात ॥ भवियण ॥
कुगुरांरा भरमाविया, बहुला बूड़ा जात ॥ भ० ॥ दृढ ॥१४॥
दान-शील-तप-भावना, शिवपुर मारग च्यार ॥ भवियण ॥
दान सुपात्र जाण्यां बिना, सरै नहीं गरज लिगार ॥ भ० ॥ दृढ ॥१५॥
नवतत्व सुधा सरधियां, छुटे दशों ही मिथ्यात्व ॥ भवियण ॥
समकित आवे इण विधे, मानु सूत्रनी वात ॥ भ० ॥ दृढ ॥१६॥
देव गुरू मिश्र मानै नहीं, मिश्र न मानै जिन धर्म ॥ भवियण ॥
यां तीनांने जाणै निर्मला, मिट्यो तिणारो भ्रम ॥ भ० ॥ दृढ ॥१७॥
समकित आयां नीपजै, साध श्रावकरो धर्म ॥ भवियण ॥
शिव रमणी वेगी वरै, टूटै आठों ही कर्म ॥ भ० ॥ दृढ ॥१८॥
समकित विन शुद्ध पालियां, अज्ञान पणें आचार ॥ भवियण ॥
नवग्रवेक ऊँचो गयो, नहीं सरी गरज लिगार ॥ भ० ॥ दृढ ॥१९॥
पाखंडियांरी संगत करै, तिण लोपी जिनवर आण ॥ भवियण ॥
समकित जाय शंका पड्यां, नंदन मणियारा जिम जाण ॥ भ० ॥२०॥
कामदेव अरणक जिसा, श्रावक अनेक बखाण ॥ भवियण ॥
देव डिगाया डिग्या नहीं, निःशंक रह्या दृढ़ जाण ॥ भ० ॥ दृढ ॥२१॥
हाड मजा रंगी जेहनी, रुचिया प्रवचन सार ॥ भवियण ॥
अरिहंत वचन अंगी करै, धन्य त्यांरो अवतार ॥ भ० ॥ दृढ ॥२२॥
ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप विना, धर्म म जाणों लिगार ॥ भवियण ॥
इम सांभल नर-नारियां, मन में कीज्यो विचार ॥ भ० ॥ दृढ ॥२३॥

उपरोक्त ढाल में ११ वीं गाथा में जो नव पदार्थ का उल्लेख है वह समस्त श्रावक को ठीक-ठीक समझना जरूरी है। अर्थात् (१) जीव—चेतन पदार्थ (२) अजीव—अचेतन पदार्थ (३) पुण्य—शुभ कर्म (४) पाप—अशुभ कर्म (५) आश्रव—जिससे कर्म आवें (६) संवर—कर्मां को रोकने वाला (७) निर्जरा—जो कर्मों को देशतः दूर करे (८) बंध—शुभ अशुभ कर्मों का आत्मा के साथ बंधना

(६) मोक्ष—समस्त कर्मों से छुटकारा होकर शुद्ध आत्मभाव में अवस्थित होना। इन ६ तत्वों में यदि जीव ८ को ठीक-ठीक समझे व एक को भी उलटा समझे तो मिथ्यात्व नहीं छूटता। यह बात ख्याल में रख कर प्रत्येक श्रावक को नवतत्व की जानकारी करना उचित है। उक्त ढाल की १२ वीं गाथा में जो दश मिथ्यात्व का उल्लेख है, उनका नाम सब कोई जानते ही होंगे। परन्तु फिर भी यहाँ दोहराते हुए यह निवेदन करते हैं कि इन दश मिथ्यात्व की पहिचान कर उनसे सदा दूर रहें। इनके नाम नीचे देते हैं। (१) जीव को अजीव सरधना—मानना (२) अजीव को जीव सरधना—मानना (३) धर्म को अधर्म सरधना—मानना (४) अधर्म को धर्म सरधना—मानना (५) साधु को असाधु सरधना—मानना (६) असाधु को साधु सरधना—मानना (७) सुमार्ग को कुमार्ग समझना (८) कुमार्ग को सुमार्ग समझना (९) मुक्ति गये को अमुक्त समझना (१०) अमोक्षगामी को मोक्षगामी समझना। इन दश बोलों में से यदि एक भी बोल किसी में पाया जाता हो तो उसे मिथ्यात्वी ही समझना चाहिये। यह जैनागम की बात—श्री भगवान की बात है। अतः प्रत्येक श्रावक को जीव-अजीव, धर्म-अधर्म, साधु-असाधु, मार्ग-अमार्ग, मुक्त व संसारी इनको जानना जरूरी है। अतः सब कोई उन बातों को समझ कर अपना सम्यक्त्व व श्रावकत्व दृढ़ करें। दान शील तप भावना को यथातथ्य समझें, ज्ञान दर्शन चारित्र तप को अच्छी तरह पहिचानें क्योंकि इनके जानने, समझने, सत्य सरधने से ही सम्यक्त्व प्राप्त होगा व सम्यक्त्व से ही श्रावकत्व होगा।

श्रावक गुण वर्णन की ढाल भी सदा ध्यान में रखना जरूरी है। हम उसे यहाँ देते हैं :—

श्रावक गुण वर्णन की ढाल

भिन २ जाणे श्रावक जीवने, जाणे अजीव पुण्य पापो जी।
आश्रव ने जाणे कर्म लगावतो, संवर टाले संतापो जी ॥१॥
भगवंत भाख्या श्रावक एहवा ॥ आंकड़ी ॥

निर्जरा ढीलो पाड़े बंध ने, करणि करे इण हेतो जी।
मोक्ष तणां सुख जाणे सासता, उघड़ीया अंतर नेतो जी ॥ भ० २ ॥

पोते परखे गुरु ने अकल सुं, अन्तर ज्ञान विचारो जी।
भेष देखी श्रावक भूले नहीं, देखे शुद्ध आचारो जी ॥ भ० ३ ॥

आदरीया व्रत साधारां मांहिला, ए म्हारे जिण धर्मो जी।
शेष रह्या कामा संसारना, तिण थी बंधै कर्मो जी ॥ भ० ४ ॥

वरतां ने जाणे माला रतन री, अविरत अनरथ खाणो जी।
रैणां देवी थी पण ए बुरी, त्यागे माठी जाणों जी ॥ भ० ५ ॥

श्रावक जाणी छे जिण आगन्या, जाण्यो धर्म अधर्मो जी।
जिण करणी में नहीं जिण आगन्या, जाणे बंधता कर्मो जी ॥ भ० ६ ॥

परचो पाखंड्या रो नहीं करें, न करे तिण थी वातो जी।
मस्तक नीचो न करे तेह ने, न करे ऊँचो हाथो जी ॥ भ० ७ ॥

भरमाया केहना लागे नहीं, न करे कूड़ी ताणो जी।
धर्म ठीकाणे झूठ बोले नहीं, पाले जिनवर आणो जी ॥ भ० ८ ॥

गुरु ने देखे दोषण लागतो, तो काढ़े तुरत निकालो जी।
लाला लोलो कर उठे नहीं, ए जिन शासण री पालो जी ॥ भ० ९ ॥

कुगुरु वांद्या रा फल तिण ओलख्या, रुलै अनंतो कालो जी।
भागल गुरु श्रावक सेवे नहीं, जिनवर वचन संभालो जी ॥ भ० १० ॥

कुगुरु ने जाणे काला नाग ज्यूँ, करड़ो तिणरो डंको जी।
मुगत मारगनां ते छै धाड़वी, चौड़े खोसे निसंको जी ॥ भ० ११ ॥

सत गुरु वांदे भले मन भाव सुं, नीचो सीस नमायो जी।
तीन प्रदषिणा दे बे कर जोड़ ने, मस्तक पग रे लगायो जी ॥ भ० १२ ॥

सुणे वखाण सतगुरु आगले, एकाएक चित लगायो जी।
साध कहै ते सुण सुण हुलसे, मन रलियायत थायो जी ॥ भ० १३ ॥
मारग जाता रे जो मुनिवर मिले, वांदे हरषित थायो जी।
विकसित पांमे साधु देख ने, वलि करै घणी नरमायो जी ॥ भ० १४ ॥
बारै वरत ने आदरता रहे, अविरत ते आगारो जी।
पोते सेवे सेवावे अवर ने, नहीं सरधै धर्म लिगारो जी ॥ भ० १५ ॥
व्याज उधारो ल्यावे पारको, घर नो काम चलायो जी।
धरम वतावे ले धन परतणो, एहते न करे अन्यायो जी ॥ भ० १६ ॥
मोसा मर्म न बोले केहना, न करे केहनी तांतो जी।
कूड कथन न काढ़े जिनमती, न करे दगो ने घातो जी ॥ भ० १७ ॥
लोक कहे ओ निन्दक पापीयो, निंदा नरक लेजायो जी।
श्रावक निंदा न करे पारकी, जिण धर्म मांहे आयो जी ॥ भ० १८ ॥
जितरा द्रव्य लोक अलोक में, जाण्यो तिणरो न्यायो जी।
द्रव्य क्षेत्र काल भाव सुं, जाण्या गुण पर्यायो जी ॥ भ० १९ ॥
लोक सुणे वखाण तिण समय, न पाड़े तिण में भेदो जी।
करम घणां पेलो समझे नहीं, तो न करे क्रोध ने खेदो जी ॥ भ० २० ॥
ओछा बोल न बोले केहने, गुण कर गहर गंभीरो जी।
चर्चा करता निच बोले नहीं, जिम छाली पीवे नीरो जी ॥ भ० २१ ॥

उपरोक्त ढाल में श्रावक के जानने आदरने योग्य बहुत सी बातें हैं, सो अच्छी तरह धारण कर तदनुसार आचरण करे।

अब हम वर्तमान आचार्य्य प्रवर बाल ब्रह्मचारी अनेक शास्त्र-वेत्ता परम कारुणिक परम पूजनीय श्री श्री १००८ श्री तुलसीरामजी महाराज कृत हृदय स्पर्शी "श्रावक व्रत धारो" ढाल यहाँ उद्धृत करते हैं। इस ढाल में श्रावक-व्रत धारण कर आत्मिक उन्नति के प्रकृष्ट मार्ग को अवलम्बन करने के लिये ओजस्विनी भाषा में उपदेश दिया है। आपकी इस ढाल का एक-एक शब्द, एक-एक अक्षर अमूल्य है। मुमुक्षु

जीव के लिए इस ढाल का प्रत्येक शब्द सदा हृदय में ग्रथित करने योग्य है। जिन्हें संसार-समुद्र तैरना हो उन्हें इस ढाल के भावार्थ को हृदयङ्गम कर शीघ्रातिशीघ्र विषयवासना को नियन्त्रित करना चाहिये।

वर्तमान आचार्य्य महोदय कृत ढाल

(देशी—दुलजी छोटो-सो)

श्रावक ! व्रत धारो,
निज जीवन-धन संभारो रे ॥ श्रा० ॥
जैनागम रहस्य विचारो रे,
श्रावक ! व्रत धारो।
क्षणिक-विषय-सुख खातिर आतुर,
मानव-भव मत हारो रे ॥श्रा०॥ नि० । ए आंकड़ी॥
अव्रत-नाला बहै दृग चाला,
रोकण तास प्रचारो रे ॥ श्रा० ॥
आत्म तलाव कर्म-जल विरहित,
करवा हित अविकारा रे ॥श्रा०॥नि०॥१॥
हिंसा वितथ अदत्तरु मन्मथ,
लोभ क्षोभ करनारो रे ॥श्रा०॥
निज मंदिर में तस्कर-तस्कर,
तास करन मुंह कारो रे ॥श्रा०॥नि०॥२॥
इर्ष्या द्वेष असूया मत्सर,
घर-घर क्लेश करारो रे ॥श्रा०॥
कलुषित-हृदय कलह-दिलदूषित,
तास करन प्रतिकारो रे ॥श्रा०॥नि०॥३॥
मुक्ति-महलनी पंचम पेड़ी,
नेड़ी निजर निहारो रे ॥श्रा०॥

वीर विभू सन्तान स्थान तुमे,
कातरता न सिकारो रे ॥आ०॥नि०॥४॥
निरय तिरय गति निगम निरोधो,
व्यन्तर असुर विसारो रे ।आ०।
ज्योतिषि ऊपर वैमानिक सुर,
देखो तास दुवारो रे ॥आ०॥नि०॥५॥
धन्य जघन्य समय शिव सम्भव,
त्रिण भव में निस्तारो रे ।आ०।
आत्मानन्द अमन्द अपूरव,
व्रत वैभव विस्तारो रे ॥आ०॥नि०॥६॥
त्याग नाग नहिं सिंह बाघ नहिं,
मार्ग नहिं भयवारो रे ।आ०।
हृदय विराग भाग जागरण,
क्यों कम्पै दिल थांरो रे ॥आ०॥नि०॥७॥
चित्त प्रधान पूणियो श्रावक,
मन्त्री अभयकुमारो रे ।आ०।
आणन्दादि उपासक वर्णक,
सप्तम अंग सुप्यारो रे ॥आ०॥नि०॥८॥
शंख-पोखली भगवति सूत्रे,
सुलसा सती श्रियकारो रे ।आ०।
राणी चिल्लणा जवर जयन्ति,
निगुणो तस अधिकारो रे ॥आ०॥नि०॥६॥
भिक्षु-रचित बारह-व्रत चोपी,
विस्तृत रूप विचारो रे ।आ०।
दृग-गोचर अथवा श्रुति-गोचर,
कर-कर आत्म उद्धारो रे ॥आ०॥नि०॥१०॥

उगणीशै नव नवी वर्षे,
चूरु शहर मझारो रे।श्रा०।
तुलसी गणपति व्रत सम्पत्ति हित,
आखी सीख उदारो रे॥श्रा०॥नि०॥११॥

इस ढाल का संक्षिप्त भावार्थः—

आचार्य्य भगवान ने मानव समाज, खास कर जैनी मात्र—को संबोधन कर उक्त ढाल में शिक्षा दी है। यद्यपि इस शिक्षाप्रद ढाल का अर्थ मारवाड़ी भाषाभाषी जनता के लिये सुगम है, तथापि हिन्दी भाषा में इसका संक्षिप्त अर्थ सर्वसाधारण की अवगति के लिये यहाँ देते हैं:—

"हे भव्य जीवो! तुम लोग श्रावक व्रत धारण करो। अपने जीवन का सच्चा धन क्या है—जरा इसे विचारो। धन, धान्य, परिग्रह आदि सांसारिक धन क्षणिक धन है। इस धन को निजी धन मत समझना। निजी सम्पत्ति वही है, जो सदा अपने काम आवे। धर्म ही एक ऐसा धन है जो इहलोक-परलोक तथा जन्म जन्मान्तर तक सहायक होता है। अतः आचार्य्य भगवान् चेतावनी दे रहे हैं कि निजी धन को सम्हालो। फिर यह उपदेश देते हैं कि जैनसूत्र सिद्धान्त की गहन बातें सोचो, समझो और अपने हृदय में अंकित करो। संसार में अनन्त काल परिभ्रमण कर लिया, अब यदि भविष्य में अधिक भव-भ्रमण रोकना है तो श्रावक व्रत धारण कर लो। क्योंकि जैन सिद्धान्त का यह कथन है कि देश व्रती समदृष्टि होने से अनन्त भव-भ्रमण रुक जायगा और थोड़े ही भव बाद निश्चय मुक्ति मिलेगी। जिन श्रावक-व्रतों के धारण से भविष्य निश्चय ही मंगलमय, सुखमय और आनन्दमय है उन्हें ग्रहण करने का सदा ही प्रयत्न करो। सांसारिक सुख क्षणिक हैं। क्षणिक सुख के लिये इस मानव-भव को व्यर्थ मत गमावो। बड़ी मुश्किल से मानव भव, आर्यक्षेत्र, उत्तमकुल और सद्गुरु संयोग व जैनधर्म मिला है और इसका सदुपयोग श्रावक व्रत धारण से ही होगा यह बात सदा ध्यान में रखो।

जब तक व्रत ग्रहण नहीं करोगे तब तक सम्यक्त्व प्राप्त होने पर भी अव्रती समदृष्टि ही रहोगे और अव्रत आश्रव हरदम लगता ही रहेगा। उस अव्रत-नाला को रोकने के लिये, आत्मरूपी तालाब में जो कर्मरूपी जल इकट्ठा हो रहा है, उसे निकाल कर तालाब को साफ करने की जरूरत है। इसलिये व्रत धारण करना उचित है ॥१॥

हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्मचर्य और परिग्रहासक्ति ये सब हर तरह से जीव को क्षुभित कर रहे हैं। आत्म—रूपी मन्दिर में नाना आत्मिक गुणरूपी बहुमूल्य वस्तुयें रहती हैं, उन सब को चुराने के लिये दुर्गुणरूपी चोरों का समूह घुस रहा है। उक्त चोरों का मुँह काला कर बाहर निकालने के लिये श्रावक व्रत ग्रहण करना अत्यावश्यक है। क्योंकि श्रावक व्रत सशस्त्र पहरेदार का काम करेगा। श्रावक व्रत ग्रहण करने से दुर्गुण रूपी चोर भीतर घुस नहीं सकेंगे ॥२॥

दूसरे की उन्नति देख मन में जो असहिष्णुता होती है, वही ईर्षा है। साधारण मारवाड़ी भाषा में इसे "ईसका" कहते हैं। दूसरे से कोई वैमनस्य (अनबनती) होने से जो उसका अनिष्ट करने का भाव होता है उसे ही द्वेष कहते हैं। दूसरे का गुण देख उस पर दोषारोपण करने का नाम असूया है। और मत्सर है उस मानसिक भाव का नाम, जिससे दूसरे की ऋद्धि संपत्ति देख कर स्वयं उसे सहन न कर सके। ये सब दुर्गुण प्रायशः मनुष्य समाज को जर्जरित कर रहे हैं। और फिर प्रत्येक घर में क्लेश कदाग्रह लगा हुआ है। पिता-पुत्र, भाई-भाई, सास-बहू, भाभी-देवर, देवरानी-जेठानी इत्यादि निकट सम्पर्क वालों में झगड़े लगे ही रहते हैं। कलह के कारण हृदय कलुषित होता है और चित्त में अशान्ति रहती है। अतः इन सबका प्रतिकार व्रत धारण से ही होगा ॥३॥

जीव क्रमशः कर्म-मल रहित होकर मुक्ति को जा सकता है। चौदह गुण स्थानक एक प्रकार से उच्च अवस्थित मुक्ति-महल में चढ़ने के लिये चौदह पेढ़ियाँ हैं। श्रावक व्रत ग्रहण से जीव पंचम गुण स्थान को प्राप्त

होता है। १४ पेढ़ियों में ४ पेढ़ी उल्लंघ कर पाँचवीं में चढ़ जाना मुक्ति-महल की एक तिहाई से अधिक ऊँचाई पार कर जाना है। पंचम गुण-स्थान पर पहुँचने से मुक्ति नजदीक सी दीख पड़ेगी। ऐसे सुन्दर उपाय को अपनाने में क्यों भयभीत हो रहे हो? हे भव्य जीवो! तुम महावीर स्वामी के अनुयायी हो। उनकी सन्तान-तुल्य होकर तुम डरपोक की तरह व्रत धारण करने में क्यों डरते हो? तुम्हें ऐसी कायरता दिखाना शोभा नहीं देता। यदि महावीर की सन्तान हो तो वीरता के साथ आत्मा पर विजय करके अपनी शक्ति प्रमाण व्रत ग्रहण करो ॥४॥

और भी देखो कि जो श्रावक व्रत ग्रहण कर उनका पालन करते हैं, उनकी गति कितनी ऊँची होती है। श्रावक निश्चय ही नरक व तिर्यंच गति में नहीं जाता, यह सिद्धान्त की बात है। और देवगति में भी भवनपति व वाणव्यंतर भी नहीं होता। श्रावक की गति तो ज्योतिषियों से भी ऊपर वैमाणिक देव की है। जिस श्रावक व्रत के ग्रहण और पालन से अशेष क्लेशमय नरक तिर्यंच गति में जाना रुक जाता है और देवगति में भी वैमाणिक देव की गति मिलती है तो भला ऐसे श्रावक धर्म को अंगीकार करने में देर क्यों? ॥५॥

श्रावक व्रत ग्रहण करने से कम-से-कम तीन भव में मुक्ति संभव पर है। बहुत ही थोड़े काल में संसार-परिभ्रमण मिट जायगा और आत्मा एक अनोखे आनन्दरस में मग्न हो जायगी। व्रत धारण आत्मा के वैराग्य-वैभव को बढ़ाने वाला है। अस्तु ऐसे श्रावक व्रत को अवश्य धारण करो ॥६॥

ज़रा सोचो तो सही, श्रावक व्रत ग्रहण का क्या अपूर्व वैभव है। कई श्रावक त्याग प्रत्याख्यान का नाम सुन कर पैर पीछे हटाते हैं। उन्हें परम दयाल आचार्य्यदेव कह रहे हैं कि हे भव्य जीवो! त्याग से इतना डर किस लिये? त्याग न तो भयानक विषधर सर्प है और न यह हिंसक सिंह व्याघ्र है। त्याग का मार्ग बिलकुल भयावह नहीं है। हृदय में वैराग्य भाव से त्याग भाव आता है और त्याग से भाग्य जागने का मौक़ा मिलता है इसलिये तुम्हें डरना उचित नहीं। तुम निडर होकर श्रावक-व्रत धारण करो ॥७॥

आचार्य्य महोदय प्रोत्साहित करने के लिये उपाशक दशांग सूत्र वर्णित आनन्दादिक श्रावकों के चरित्र श्रवण व मनन करने के लिये उद्बुद्ध करते हैं। चित्त नामक मन्त्रीश्वर, पुणिया श्रावक, अभयकुमार मन्त्री की बातें हृदय में धारकर श्रावक व्रतधारी का दृष्टान्त ग्रहण करने को कहते हैं। इन सब श्रावकों का वर्णन सुन तुम्हारा हृदय स्वतः श्रावक व्रत ग्रहण करने के लिये लालायित होगा। पुस्तकों से अथवा जानकार श्रावक अथवा मुनिराजों से इनकी कथा सुन लो और श्रावक व्रत धारण करो ॥८॥

उपरोक्त श्रावकों के अलावा श्री भगवती सूत्र वर्णित शंख पोखली श्रावक एवं सती सुलसा, चेलणा राणी, दृढ़ धर्मिणी जयन्ती श्राविका का अधिकार सुनकर श्रावक व्रत धारण कर लो ॥९॥

श्रावक-व्रत विषय में यदि विस्तृत रूप से जानना हो तो प्रातःस्मरणीय परमाराध्य जिनेश्वर भगवान तुल्य भविजनतारक श्री भिक्षु स्वामी रचित बारह व्रत की चौपाई या तो पढ़ लो अथवा सुन लो और फिर आत्म-उद्धार का पथ श्रावक-व्रत धारण करो ॥१०॥

१९९६ साल के चातुर्मास में चूरू शहर में गणिराज श्री तुलसीरामजी महाराज ने कृपा करके व्रत रूपी जीवन धन ग्रहण करने के लिये यह उदार शिक्षा इस ढाल में दी है जिससे कि जीव श्रावक-व्रत रूपी पाथेय को साथ लेकर यह संसार-अटवी सुख पूर्वक पार कर सके ॥११॥

गणाधिपति की उपरोक्त उत्साह-वर्द्धक ढाल प्रत्येक नरनारी को शीघ्रता से कर्तव्य निर्णय कर श्रावक-व्रत धारण करने के लिये प्रेरित कर रही है। आशा है, जिन्हें भव-भ्रमण घटाने की किञ्चित् भी इच्छा है, जिन्हें आदर्श जीवन बिताना है, जिन्हें संसार में रहकर भी संसार से निर्लिप्त होने की भावना का उद्रेक हृदय में करना है, जिन्हें समाज में ख्याति, परिवार में प्रतिष्ठा, राष्ट्र में गौरव का स्थान व परलोक गमन के समय यथेष्ट संबल इकट्ठा करना है, वे नवम आचार्य्य के

नवनवति सम्वत् रचित चिर नवीन नीतिवाक्य को हृदय में धार श्रावक व्रत ग्रहण करते हुए पंचम गुण स्थान तक पहुँच कर आगे ऊर्द्ध गमन का मार्ग सहज-सरल बनावेंगे।

वर्त्तमान संसार एक भयानक परीक्षा-समय के भीतर से गुजर रहा है और नवीन योजना व नवीन परिकल्पना के लिये आतुर है। यह आतुरता तो क्षणिक विषय सुख के लिये है। पर समझदार श्रावक स्वयं व्रत ग्रहण कर दावे के साथ कह सकेगा कि तथाकथित सभ्य संसार की नवीन निर्माण परिकल्पना जब तक ईर्षा, द्वेष, असूया, मत्सर, द्वन्द्व और पौद्गलिक प्रतिस्पर्धारूपी कलह-बीजों को समूल उन्मूलित करने में प्रयोजित नहीं होगी, जब तक हिंसा, झूठ, चौर्य्य, व्यभिचार और परिग्रहासक्ति घटा न सकेगी तब तक घर-घर का क्लेश, समाज-समाज का संघर्ष, राष्ट्र-राष्ट्र का विरोध, जाति-जाति का वैमनस्य, वर्ण-वर्ण का कलह कदापि दूर न होगा। यदि व्रत-धारी श्रावकों द्वारा आर्त्त संसार को उच्चस्वर से यह बताने का प्रयास रहे कि श्रावक व्रत, व्यक्ति व समष्टि, सबके लिये सुखद है, मोक्षद है, शान्तिदाता है और इन्हें अपनाने के लिये सबको चेष्टित होना चाहिए तो विश्व में एक नवीन-युग, नवीन रचना, नवीन आशा की ज्योति प्रसरित हो। समय अनुकूल है, जरूरत है स्वयं सच्चा श्रावक बनने की और मनुष्यमात्र को श्रावक धर्म समझाने और धराने की। इससे बढ़कर और कोई महान कर्त्तव्य नहीं है।

जैन धर्म का विशेषत्व ही यह है कि वृद्ध हो या युवा, बालक हो या शिशु, नर हो या नारी, सब कोई स्व-स्व शक्ति प्रमाण व्रत ग्रहण कर सकते हैं। साधुओं को पंच महाव्रत तीन करण तीन योग से ग्रहण करके आजीवन पालन करना पड़ता है। परन्तु विषयी गृहस्थी, पाँच अणुव्रत, तीन गुण व्रत व चार शिक्षा व्रत ये श्रावक के

बारह प्रकार व्रत, जो कि देश चारित्र के पर्याय में आते हैं, उन्हें यथा-संभव ग्रहण कर आश्रव-द्वार कुछ रूंधने सकते हैं और क्रमशः संवर बढ़ाते हुए सर्वव्रती होने की भावना को सफल कर सकते हैं। श्रीमद् आचार्य्य भगवान् की यह ढाल करीब बारह महीना पहिले रचित होकर प्रकाश्य में बतलाई गई। तब से श्रावक लोगों के हृदय में व्रत ग्रहण करने की तीव्र आकांक्षा हुई है। व्रत-धारण की सुविधा के लिये व्रत ग्रहण की विधि कुछ इस पुस्तिका में लिपिबद्ध की है। प्रत्येक गृहस्थ श्रावक-श्राविका, बालक, वृद्ध, युवक, युवती इसको देख कर अपनी सामर्थ्य व जरूरत समझ करके व्रत धारण कर लेवें। और जो व्रत धारण किया वह जिस मिति को, जिस रूप में धारण किया, वह इस पुस्तक में जो निर्दिष्ट स्थान छोड़ा गया है वहाँ लिपिबद्ध कर रखने से सदा उस पर ख्याल रहेगा। पीछे यदि उसमें और संकोच करना हो तो निर्दिष्ट स्थानों में फिर जैसा अधिक संकोच करे उसे लिपिबद्ध कर लें। श्रावक-श्राविका प्रतिक्रमण करते समय अपने ग्रहण किये हुए व्रतों पर विचार करके उनमें लगे अतिचारों को, दोषों को भविष्य में टालने की आदत रखें और कम से कम प्रत्येक पखवाड़े तो अपना ग्रहण किया हुआ व्रत एक बार जरूर पढ़कर याद कर लें।

श्रावक व्रत ग्रहण विधि

श्रावक प्रतिक्रमण में ज्ञान के १४, सम्यक्त्व के ५, बारह व्रत के ६०, कर्मादान १५ और संलेखणा के ५ यह कुल ९९ अतिचार व १८ पापस्थान वर्जनीय बतलाये हैं। व्रतधारी श्रावक को सदा इन अतिचारों व पापस्थानकों से दूर रहना उचित है। श्रावक गण के व्रत धारण की सुगमता के लिए नीचे इनका संक्षिप्त दिग्दर्शन कराया जाता है। इन पर ध्यान रख कर प्रत्येक श्रावक को स्व शक्ति प्रमाण व्रत धारण करना चाहिये। सांसारिक आवश्यकताओं के अनुसार जो कुछ आगार रखे जायँ उन्हें अपनी दुर्बलता समझ क्रमशः घटाने के लिये प्रयत्न करें।

व्रत लेते समय करण व योग खोलकर व्रत लेना चाहिये। कम से कम १ करण १ योग से और ऊपर में शक्ति प्रमाण २ करण २ योग अथवा २ करण ३ योग से व्रत लें। ३ करण ३ योग से व्रत लेना तो गृहस्थ के लिये दुरूह है। ४९ भांगों को अच्छी तरह समझ कर प्रत्येक नर-नारी को व्रत धारण करना चाहिए।

ज्ञान

ज्ञान का कोई व्रत ग्रहण नहीं होता परन्तु श्रावक इतना जरूर मन में संकल्प कर ले कि आवश्यक कर्तव्य* सामायिक, प्रतिक्रमण,

* श्रावक को प्रतिदिन सामायिक करने का तो नियम लेना ही चाहिए, और कम से कम एक नवकरवाली नमोक्कार मंत्र गुणने जपने का तो नियम ही होना चाहिए। साधु साध्वियाँ गाँव में हों तो उनके दर्शनका व व्याख्यान श्रवण का नियम अवश्य करना चाहिए। पक्खी अथवा कम से कम चौमासी पक्खी को तो प्रतिक्रमण करने का नियम करना चाहिये।

पौषध आदि में जो पाटियाँ कहनी पड़ती हों उन्हें यथा समय कहे और शुद्ध रूप से ठीक-ठीक उच्चारण ध्वनि और घोष के साथ कहे। इन क्रियाओं के करते समय विनयशील हो तथा मन वचन और काया को एकाग्र रखे। ज्ञान और ज्ञानी की आसातना न करे।

सम्यक्त्व

श्रावक को निम्नलिखित बातों पर ध्यान रख कर दृढ़ता से इन्हें पालन करना चाहिये :—

(१) वीतराग अरिहंत देव को छोड़ दूसरे को अपना उपास्य धर्म-देव न समझना।

(२) शुद्ध साधु (पंच महाव्रतधारी, जिनाज्ञा मानने वाले) को छोड़ दूसरे को धर्म-गुरु न मानना।

(३) वीतराग भगवान के प्ररूपित धर्म को ही अपना धर्म स्वीकार करना।

जिन बातों में दोष लगता है उन पाँचों बातों अर्थात् शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, परपाखंडी-प्रशंसा और पर पाखंडी-परिचय से दूर रहना चाहिए।

संक्षेप में इन पाँच अतिचारों की व्याख्या निम्न प्रकार है :—

(१) जिन प्ररूपित शास्त्रों के कथन में संशय करना—जैसे कि एक पानी की बूँद में असंख्य जीव हैं सो कैसे ? इसी प्रकार और भी गहन वचन सुनकर समझने की शक्ति न होने पर, संशय करने का नाम शंका है। अगर किसी के समझ में न आवे तो स्थविर संत मुनिराज से समझना चाहिये। शंका करने से सम्यक्त्व का नाश हो जाता है। जिन वचन ध्यान में न आवे तो अपनी बुद्धि की कमी समझनी चाहिये, परन्तु जिन वचनों को सत्य ही मानना चाहिये।

(२) जिन धर्म को मिथ्या समझ दूसरे धर्म को अच्छा समझने

के भाव को कांक्षा कहते हैं। वीतराग-भाषित धर्म के सिवाय दूसरे धर्म की स्वप्न में भी इच्छा नहीं करनी चाहिये।

(३) धर्म के फल में शंका करना कि फल मिलेगा या नहीं, इसको विचिकित्सा कहते हैं। धर्म का फल शीघ्र प्रकट होवे या देर से परन्तु होता अवश्य है, ऐसी दृढ़ धारणा रखे।

(४) बाह्य आडम्बर देखकर अन्य मतावलम्बियों की प्रशंसा करने का नाम पर-पाखंडी प्रशंसा है। इसे सम्यक्त्वी को वर्जना चाहिये।

(५) जिस प्रकार दूध में नमक, छाछ या नींबू आदि के गिराने से दूध फट जाता है उसी प्रकार मिथ्या दृष्टि से परिचय रखने से सम्यक्त्व नाश होने की संभावना रहती है। इसलिये मिथ्या दृष्टि से धार्मिक घनिष्ट परिचय रखने को पर-पाखंडी-संस्तव कहते हैं। इससे सदा बचना उचित है।

आगार

लौकिक व्यवहार, कुलाचार, सामाजिक व्यवहार, राजाज्ञा, अटवी आदि में, आपत्ति काल में अथवा बलवान के दबाव, दैवयोग आदि से किसी देव-देवी, प्रस्तर अथवा चित्ररूप किसी को मानना पड़े तो सांसारिक स्वार्थ बुद्धि से मानने के आगार उपरान्त धर्म बुद्धि से कदापि न मानूँगा।

बारह व्रत

बारह व्रत लेते समय छः प्रकार के आगार साधारणतया श्रावक रखते हैं, इसलिये जिन्हें जरूरत हो वे पहले खोलें एवं आगार उपरान्त त्याग करें।

यह बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए कि ये आगार अपनी दुर्बलता के कारण रखे जाते हैं। प्रतिकूल परिस्थिति में कठोर परिषह

आ पड़ने पर भी जो व्रत निर्वाह कर सकते हैं उनके लिये इनकी जरूरत नहीं। उपरोक्त छः प्रकार के आगार ये हैं:—(१) राजाज्ञा (२) समाजाज्ञा (३) दैवयोग (४) बलवान का दबाव (५) कुटुम्बियों का दबाव तथा (६) अटवी में आपत्तिकाल में भ्रमण। इन सब कारणों के उपस्थित होने पर व्रतधारी श्रावक के छूट होने से व्रत भङ्ग का दोष नहीं लगता।

पहला स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत :—

(क) त्रस हिंसा सम्बन्धी—

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, त्रस (हलते चलते) निरपराधी जीव को जानबूझ कर मारने की बुद्धि से मारने का त्याग......करण ......योग से।

श्रावक को जानना उचित है कि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि जीव कौन-कौन से हैं, ताकि उनका घात न हो ऐसा ध्यान हरदम रहे।

बेइन्द्रिय (द्वीन्द्रिय) : कृमि, जलौक (जोंक) आदि।
तेइन्द्रिय (त्रीन्द्रिय) : कीड़ी, कुंथुवा, मकोड़ा आदि।
चतुरिन्द्रिय : भँवरा, मक्खी, विच्छू, मच्छर आदि।

पंचेन्द्रिय : जलचर, थलचर, उरपर, भुजपर, खेचर मत्स्य, कच्छप, मनुष्य, गाय, भैंस, बकरी, घोड़ा, हाथी, शशक, सांप, मयूर, कबूतर, उंदरा, नोलिया आदि।

निम्न लिखित बातें स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत की पुष्ट करने वाली हैं अतः हर समय ध्यान में रखने लायक हैं। कोई इनका त्याग करना चाहे तो त्याग भी करे।

(क) अपने आश्रित जन व पालित दासदासी, चतुष्पद जन्तु आदि को क्रोध या लोभवश खाने-पीने में अन्तराय न देना।

(ख) किसी भी जीव पर क्रोध व लोभवश कठोर प्रहार न करना।

(ग) किसी भी जीव का क्रोध व लोभवश अंगच्छेद न करना अथवा डमरू, त्रिशूल तथा चक्रादि चिन्ह लोह तप्त कर न लगाना।

(घ) किसी भी जीव को क्रोध व लोभवश कठोर बंधन से न बाँधना।

(ङ) किसी भी प्राणी पर क्रोध व लोभवश अत्यधिक भार न लादना।

निम्न लिखित समयोपयोगी बातों पर भी ध्यान देना आवश्यक है :—

(१) लिमिटेड कम्पनी या अन्य साझेदारी काम में शरीक होना अर्थात् शेयर डिबेंचर लेना, पाँती रखना आदि कार्य के पहले देखना चाहिये कि ऐसी कम्पनी या कारबार में महाआरंभ और पंचेन्द्रिय घात तो नहीं होता! ऐसे होते हुए देखे तो ऐसा शेयर लेने का त्याग करे व ऐसी कम्पनी का डाईरेक्टर (कार्यकर्ता) बनने का त्याग करे। यदि बिलकुल त्याग न कर सके तो मर्यादा उपरान्त त्याग करे।

(२) राज्य की व्यवस्थापिका सभा, मन्त्रीमंडल, युद्धपरिषद् आदि में मेम्बर होते समय श्रावक विचार करे कि वहाँ युद्ध जन्य हिंसात्मक कार्य्य में मतामत देना पड़ेगा। यथाशक्ति आगार उपरांत मतामत देने का त्याग करे।

आगार

(१) राज्य की नौकरी करते हुए किसी को प्राणदण्ड देना पड़े अथवा प्राणदण्ड देने योग्य अपराध के लिए अभियुक्त करना पड़े तो आगार।

(२) राज्य विप्लव, मार्शल लॉ, युद्ध विग्रह, अथवा अन्य उपद्रवादि के समय किसी निरपराध प्राणी को भी वध, बन्धन, ताड़न करना पड़े अथवा उत्तेजित जनता के दबाव से आत्मरक्षार्थ विवश हो कोई हिंसा करनी पड़े तो आगार।

(३) गृहस्थ जीवन में सांसारिक हर एक घरेलू कार्य्य करते समय घुने हुए धान, इन्धन आदि को साफ करते तथा स्नानादि के समय पानी के बहने अथवा चूल्हा, भट्टी, पर्लीडे (पानीघर) में सावधानी से काम करते हुए भी अथवा यतना के अभाव से कोठार में सामान आदि रखते समय यदि कीड़ी, मकोड़ी, पतंग, उदेही आदि जीव-वध हो जाय तो आगार।

(४) स्वास्थ्य रक्षार्थ किसी जीव व पालित पशु का घाव धोने तथा ड्रेन, नाला आदि गन्दी जगह साफ कराते समय जीव-वध हो जाय तो आगार।

(ख) स्थावर जीव हिंसा विषयक :—

श्रावक को पहले व्रत में यद्यपि निरपराधी बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जीवघात स्वेच्छापूर्वक करने का त्याग लिया जाता है तथापि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतिकाय के आरंभ समारंभ की मर्यादा भी चाहिये जिससे अव्रत घट कर जीवन और भी अधिक संयमी बने। अतः इस प्रकार के त्याग का एक मोटा ढाँचा यहाँ बतलाया जाता है। इस प्रकार त्याग करने से गृहस्थ को किसी तरह की

बाधा पहुँचती नहीं दिखाई देती । फिर भी प्रत्येक व्यक्ति स्व-स्व धारणा व शक्ति के प्रमाण संकोच अथवा विस्तार करने की आदत डाले ।

पृथ्वीकायिक हिंसा :—

(१) मुरड़, मिट्टी, कंकर, पत्थर अथवा कुआ, बावड़ी, तालाब आदि के लिये स्वयं मर्यादा करे उतने हाथ से नीचे पृथ्वी खोदने का १ करण १ योग से त्याग । दूसरे से खुदावे तो सर्वथा अलग अलग खोल कर त्याग करे ।

(२) खेती निज हाथ से करने का त्याग करे तो १ करण १ योग से । दूसरे द्वारा कराना होय तो मर्यादा उपरान्त खेती कराने का त्याग रखे ।

(३) सोना, रूपा, ताँबा, लोहा, अबरक, हीरा, पन्ना, कोयला, पेट्रोल, किरासीन तेल आदि अर्थ स्वयं पृथ्वीकायिक

आरंभ का त्याग १ करण १ योग से। उपर्युक्त पदार्थों की कंपनी के शेयर डिबेंचर आदि मर्यादा उपरान्त लेने का त्याग २ करण ३ योग से।

(४) घर खर्च के लिए मुरड़ मिट्टी, खार, नमक, सोडा, सफेदमिट्टी, कंकर-पत्थर आदि वस्तुएँ निकलाना, लेना हो तो साल में......उपरांत निकालने का व लेने का त्याग।

(५) निज के लिये अथवा किसी स्वजन, परिवार अथवा किसी संस्था के लिये यावज्जीव ......उपरान्त मकान बनवाने का त्याग व उन मकानों को छोड़ और दूसरे कार्य के लिये पृथ्वीकाय के आरंभ का त्याग। हवेली, नोहरा, गोदाम, प्रेस, फेक्टरी, दुकान, पाठशाला, व्यायामशाला, बगीचा, भँवरा

आदि की संख्या खोले उसके उपरान्त त्याग।

(६) पुराने मकान, दुकान आदि की मरम्मत का मर्यादा उपरान्त त्याग।

(७) कुआ, बावड़ी, तालाब आदि बंधवाने व दुरुस्त कराने का मर्यादा उपरान्त त्याग।

अप्पकायिक हिंसा :—

(१) निज शरीर वास्ते अथवा परिवार घरवालों के वास्ते किसी भी समय एक दिन में.........मन से उपरान्त जल के आरंभ का त्याग।

(२) पानी बिना छाना पीने का त्याग (स्व गृह में)।

(३) मकानात वगैरह अपनी मर्यादा मुजब कराने का हो तो उस में दैनिक.........मन या.........पखाल से उपारान्त जल के आरम्भ का त्याग।

(४) होली आदि पर्व पर पानी उछालने का त्याग अथवा मर्यादा उपरान्त त्याग।

(५) कुवे, बावड़ी, रेंट वगैरह से पानी किराये पर या हाँसिल पर देने का या निकालने का त्याग या मर्यादा करें।

आगार

(१) विवाह तथा अन्य काम आ पड़े तो उपरोक्त मर्यादा से उपरान्त........मनतक जल का आरंभ करने का आगार।

(२) पानी छान कर पीने का जो नियम लिया वह स्व गृह में है। दूसरे के घर, जीमनवार एवं मुसाफिरी में आगार।

(३) सामाजिक, लौकिक कीर्त्ति के लिए अथवा ग्राम्य व नागरिक संगठन के हेतु किसी जगह प्याउ पो—जल पिलाने का प्रबन्ध करना पड़े तो दिन में..........घड़े या................मन तक जल पिलाने का आगार।

(४) किसी भी शहर की म्युनिसिपल संस्था, स्वास्थ्य संस्था आदि के सभासद होने के कारण उक्त संस्था से किसी प्रकार जल के आरम्भ की व्यवस्था हो तो उसमें सम्मति देने का आगार।

(५) आग या दावानल लगने से अप्पकाय के आरंभ का आगार।

(६) वर्षा में चलते समय अप्पकाय का आरंभ, मर्यादा उपरान्त हो तो आगार।

(७) जल प्लावन, बाढ़ आदि में अप्पकाय के आरंभ का आगार।

(८) खेती की मर्यादा रखी हो उस खेती के लिए जल सींचने का आगार। अथवा उस खेती में जल जम गया हो तो निकालने का आगार।

तेऊकायिक हिंसा :-

(१) निज के लिए, घरवालों के लिए, स्वजन के लिए, नित्य की बत्ती, बिजली बत्ती, लालटेन, दीपक, कूकर धुणी, चिलम, अंगीठी, सिगरेट, बीड़ी, चूल्हा, भट्टी, गैसबत्ती, मोमबत्ती, दियासलाई, मसाल, टॉर्च, धूपियां, रेडियो, अगरबत्ती आदि जो वस्तु रखनी हो उससे अधिक स्वयं जलाने का त्याग।

बन्दूक...तमंचा...पिस्तोल....

से अधिक दैनिक स्वयं न

चलाना अथवा सम्पूर्णतया त्याग।

(२) कूड़ा, कचरा, इकट्ठा कर जलाने का त्याग या मर्यादा उपरान्त त्याग।

(३) लग्नोत्सव, दीपावली आदि पर्वपर आतिशबाजी छोड़ने का त्याग या मर्यादा उपरान्त त्याग।

(४) होली जलाने का त्याग।

आगार

(१) विवाहादि उत्सव, सार्वजनिक उत्सव आदि में अधिक तेउकायिक आरंभ का आगार। विवाह के समय अग्नि के समक्ष वर-वधू रख कर विवाह कार्य हो तो उस समय के तेउकायिक समारंभ का आगार तथा लौकिक जन्म, मृत्यु के अवसर पर कोई होमादि दाहादि करना हो तो उसका आगार।

(२) दूसरे की जलायी बत्ती, रोशनी, लालटेन आदि को उपयोग में लाने का आगार।

वायुकायिक हिंसा :—

निज वास्ते अथवा घर निमित्त अथवा किसी संस्था के

निमित्त दिन में........उपरान्त हाथ पंखा, ताड़ पंखा तथा अन्य प्रकार का हस्त चालित पंखा व ......उपरान्त बिजली पंखा चलाने का त्याग।

घर मकान में समस्त जिन्दगी में......से उपरान्त बिजली पंखा न लगाऊँगा। हवा से चलने वाला पंखा अथवा कोई यंत्र दिन में......से उपरान्त चलाने का त्याग।

रेडियो, ग्रामोफोन, फोनोग्राफ, टेलिग्राफ, टेलीफोन, इञ्जिन, मोटर, बुहारी, चरखा, झूला, गुड्डी, पतंग, बाजा आदि हरएक साधन जिससे वायुकाय का आरंभ हो वह......से उपरान्त एक दिन में उपयोग में न लाऊँगा।

आगार

(१) साधारणतया बोलते, चालते, फिरते,

घूमते, गाते, बजाते, वायुकाय का आरम्भ हो उसका आगार।

(२) दूसरे के चलाये हुए पंखे के नीचे हवा लेने का आगार। अथवा दूसरे के चलाए हुए अथवा चलते हुए यन्त्रादि को काम में लाने का आगार।

वनस्पतिकायिक हिंसा :—

(१) निज हाथ से बाथ में आवे उसके उपरान्त मोटा वृक्ष छेदने का त्याग।

(२) निज के लिए अथवा परिवार तथा किसी संस्था के लिये मकान बनाने की मर्यादा की है उस मर्यादित मकानात के लिये सहतीर, कड़ी, पाटिया, चौखट, कपाट, किवाड़ियाँ, जाली, झरोखा, फर्नीचर (असबाब) चौकी, पलंग, कुर्सी, टेबल, पाट, बाजोट, निसरनी, तिपाई आदि बनाने के लिये स्वयं हरा भरा वृक्ष काटने का त्याग।

(३) अनन्तकाय जमीकंद का आरंभ जैसे आदा, आलू,

सकरकन्द, प्याज (काँदा), लहसुन, मोथिया, कसेरू, हलदी, ओल, गाजर, मूली, बिट, सटी आदि की खेती, छेदन-भेदन का त्याग। १ करण १ योग से।

दूसरे से कटाना पड़े तो आगार उपरान्त त्याग।

(४) मकान के चौतरफा शोभा आदि के लिये वृक्षादि रोपन, छेदन तथा भेदन आदि साल भर में......से उपरान्त करने का त्याग।

(५) हरी घास, घर खर्च निमित्त साल में........से उपरांत कटाने का त्याग।

(६) अपने हाथ से धान्य, फल, फूल, फली, पत्र......से उपरान्त दिन में उखाड़ने का व तोड़ने का त्याग।

दूसरा स्थूल मृषावाद विरमण व्रत

दूसरे अणुव्रत में मैं स्थूल झूठ बोलने से विरत होता हूँ। इस की धारणा पाँच तरह से करता हूँ। द्रव्य की दृष्टि से (१) कन्यालीक (२)

गवालीक (३) भूम्यालीक (४) थापण मोसा और (५) कूड़ी साख— इत्यादि स्थूल (मोटी) झूठ मर्यादा उपरान्त नहीं बोलूँगा, न बुलाऊँगा। मन से, वचन से, काया से। द्रव्यतः मेरा व्रत इसी तरह सीमित है। क्षेत्र की दृष्टि से सर्व क्षेत्रों में है। काल की दृष्टि से जीवन पर्यंत है। भावना की दृष्टि से राग द्वेष रहित और उपयोग सहित है। गुण की दृष्टि से संवर और निर्जरा के हेतु है। इस मेरे दूसरे व्रत में कोई अतिचार-दोष लगा हो तो उसकी आलोचना करता हूँ।

(१) किसी पर मिथ्या कलंक लगाया हो (२) रहस्य बात-गुप्त बात प्रगट की हो (३) स्त्री पुरुष की मार्मिक बात प्रगट की हो (४) मिथ्या उपदेश दिया हो (५) झूठे लेख किए हों तो उसका पाप मिथ्या हो।

ऊपर जिन पांच मोटी झूठों का वर्णन आया है, उनका खुलासा नीचे दिया जाता है :—

(१) कन्यालीक :—

अपनी संतान छोड़ अन्य किसी के विवाह सगाई निमित्त वर-वधू के विषय में किसी प्रकार का झूठ बोलने का त्याग।

(२) गवालीक :—

अपने गाय, भैंस, घोड़ा आदि चतुष्पद जन्तुओं को छोड़ दूसरों के विषय में क्रय-विक्रय के मौके असत्य गुण-दोष कहने का त्याग।

(३) भूम्यलीक :—

अपनी घरेलू जमीन छोड़ दूसरे की जमीन लेते बेचते सौदा

कराते समय किसी प्रकार की
झूठ बोलने का त्याग।

(४) थापनमोसा :—

किसी की अमानत की
चीज अथवा बंधक (गिरवी)
की चीज को इन्कार करने का
त्याग।

(५) कूड़ीसाख :—

अदालत अथवा पंचों के
सामने झूठी साखी देने व झूठा
गवाह पेश करने का त्याग।

उपरोक्त पाँच प्रकार की झूठ के उपरांत और भी ऐसी मोटी झूठ का त्याग करे। स्वार्थ व स्व निमित्त झूठ छोड़े तो बहुत अच्छा।

उक्त द्वितीय व्रत के निम्नलिखित पाँच अतिचार हैं सो इन्हें हरदम याद रखकर टालते रहने से दूसरा व्रत पुष्ट होता है।

(१) सहसाऽभक्खाणे :—

बिना विचारे एकदम किसी पर मिथ्या दोष (कलंक) लगाना यह पहला अतिचार है।

व्रतधारी, आत्मार्थी जीवों को इसका त्याग करना चाहिये।

(२) रहसाऽभक्खाणे :—

रहस्य—गुप्त बात, सन्देह या बिना सन्देह प्रकट करना, किसी को दबाने के लिये शर्मिन्दा करने व नीचा दिखाने के लिये उसकी गुप्त बात प्रकट करना या किसी स्त्री पुरुष को एकान्त में बातचीत करते

देख कोई कलंक लगाना या किसी मित्र या राज-कर्मचारी को आपस में वार्तालाप करते हुए जान ऐसी बात करे कि जिससे उनको कष्ट पहुँचे। ऐसी बातें सर्वथा त्यागने लायक हैं।

(३) सदारमंतभेए :—

किसी स्त्री की गुप्त बात उसके पति को, और किसी पुरुष की गुप्त बात उसकी स्त्री को, किसी के सामने प्रकट नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इससे एक दूसरे को आघात पहुँचता है। इसलिये इसका त्याग उपयोग सहित करे।

(४) मोसोवएसे :—

दूसरे को असत्य उपदेश देना—किसी भाई, मित्र आदि के आपस में विरोध डालने का उपदेश, विकथा, झूठ, प्रपंच रच कर अन्य को पराजय करने की राय देने को मृषा उपदेश कहते हैं। इसलिये इन सब बातों से दूर रहना चाहिये और यथा प्रमाण त्याग करना चाहिये।

(५) कूडलेहकरणे :—

झूठा लेख, जाली काम करने को कूट लेखकरण कहते हैं—जैसे १००) रुपया देकर ५००) का झूठा खत लिखाना, कम देकर अधिक लिखना, दूसरे के नुक्सान के लिये कोई झूठा वही-खाता, लिखावट, दस्तावेज, कागद, चिट्ठी आदि बनाना। राज्य का कोई टैक्स छिपाने के लिये जैसे—इनकमटैक्स, सुपर-टैक्स, अधिक लाभ कर, सेलटैक्स आदि छिपाने के

उद्देश्य से झूठी बही अथवा झूठा रिटर्न दाखिल आदि सब इसमें शामिल आ जाते हैं, अतः इन्हें छोड़ना चाहिये।

इसके अतिरिक्त किसी अंगहीन को उसकी अंगहीनता की बात उसका जी दुखाने के लिए न कहनी चाहिए।

आगार

हंसी मजाक में, भय से, क्रोध से, राजाज्ञा से, अथवा देव दवाव से अथवा अपने या अपने घनिष्ट आत्मीय के प्राण बचाने के लिए कोई असत्य वचन निकल जाय तो आगार है। थापनमोसा के सम्बन्ध में यदि कोई ऐसा आगार रखना उचित समझे कि मालिक को असत्य न कहूँगा परन्तु दूसरे को असत्य कहने की जरूरत पड़े तो आगार है तो अपनी दुर्बलता समझ आगार उपरांत त्याग करे।

तीसरा स्थूल अदिण्णादाण विरमण व्रत

तीसरे अणुव्रत में मैं स्थूल चोरी करने से निवृत्त होता हूँ। इसकी धारणा पाँच तरह से करता हूँ। द्रव्य की दृष्टि से खात खोद—सेंध लगा, गाँठ खोल, ताला पर कुंजी कर, बाट पाड़, कोई बड़ी गिरी वस्तु धनी की जानकारी होते हुए चुरा लेना--इत्यादि स्थूल--(मोटी) चोरी मर्यादा उपरान्त नहीं करूँगा न कराऊँगा, मन से, वचन से, काया से। द्रव्यतः मेरा व्रत इसी तरह सीमित है, क्षेत्र की दृष्टि से सर्व क्षेत्रों में है। काल की दृष्टि से जीवन पर्यंत है। भावना की दृष्टि से राग-द्वेष रहित, उपयोग सहित है। गुण की दृष्टि से संवर और निर्जरा के हेतु है। इस मेरे तीसरे व्रत में कोई अतिचार--दोष लगा हो तो उसकी आलोचना करता हूँ।

(१) चोर की चुराई वस्तु ली हो (२) चोर को सहायता दी हो (३) राज विरुद्ध व्यापार किया हो (४) कूट तोल, कूट माप किया हो (५) वस्तु में भेल संभेल की हो—अच्छी दिखा कर खराब दी हो तो उसका पाप मिथ्या हो।

प्रत्येक मानव को सम्पूर्ण [चोरी]का त्याग करना चाहिए। अगर ऐसा न हो सके तो निम्नोक्त पांच प्रकार की चोरी के प्रत्याख्यान तो अवश्यमेव दो करण तीन योग (या कम वेशी) से करे।

(१) खात खोद कर :—

शस्त्र के प्रयोग से मकानादि की दीवालें फोड़ कर किसी प्रकार के धन-माल या मूल्यवान वस्तु की चोरी नहीं करनी चाहिये। अतः ऐसी चोरी का त्याग करे।

(२) गठड़ी छोड़ :—

द्रव्य की गठड़ी, थैला वगैरह कोई सौंप जावे तो वापिस आकर माँगने पर इन्कार नहीं करना व रखी हुई गठड़ी के द्रव्य को रद्दो-बदल नहीं करना चाहिये। अतः इस तरह की चोरी का त्याग करे।

(३) बाट पाड़कर :—

रास्ते में विचरते हुए लोगों को लूटना या धाड़ा नहीं पाड़ना चाहिये। इस तरह के कार्य का त्याग करे।

(४) ताला पर कुंजी कर :—

दूसरे के तालों की नई कुँजी बना, मकान मालिक की गैरमौजूदगी में ताले खोल कर धन निकालने का कार्य बहुत बुरा है। इसका त्याग करे।

(५) किसी की गिरी हुई वस्तु को—उस वस्तु के स्वामी को पता मालूम होने पर—उसे ग्रहण न करे। किसी मनुष्य की कोई वस्तु रास्ते में गिर जाय या कोई कहीं छोड़ या रख कर भूल जाय तो श्रावक, मालिक को जानते हुए, ग्रहण नहीं करे। अगर विना मालिक जाने वस्तु ग्रहण करली जावे तो बाद में मालिक प्रकट हो जाने पर शीघ्र वापिस लौटा देनी चाहिये। ऐसा धन-माल लेने का त्याग करे।

इस व्रत के अतिचारों को जानना जरूरी है। और उनसे सदा बचे रहने से यह व्रत पुष्ट होता है। अतिचार निम्न प्रकार बताये गये हैं :—

(१) तेनाहडे :—

चोरी की चीज खरीदना व दूसरे से खरीदवाने के कार्य को त्यागना चाहिये। बहुत से लोग चोरी का त्याग कर देते हैं मगर चोरी की वस्तु सस्ती मिलने पर खरीद लेते हैं सो ठीक नहीं है। इसलिये इसको भी चोरी के सदृश समझ परित्याग करना चाहिये।

(२) तक्करप्पओगे :—

चोर को चोरी करने में सहायता देने से अतिचार लगता है। चोर को लालच वश खान-पान, वस्त्र-मकान आदि देकर चोरी कराकर लाभ उठाना निन्दनीय है। अतएव इस कार्य को त्यागना चाहियें।

(३) विरुद्धरज्जाइक्कमे :—

राजा की आज्ञा के विरुद्ध-काम करने से अतिचार लगता है। राजा के खिलाफ कोई अन्याय

का काम नहीं करना चाहिए। राज्य से बाहर न जाने वाली वस्तु छिपाकर ले जाना, राज्य में न आने वाली वस्तु को छिपाकर लाना, कोई निषिद्ध वस्तु का व्यापार करना, जिस राज्य में बसते हों, उसके शत्रु राजा से अथवा शत्रु राज्य के निवासी से व्यापार करना आदि राज्य विरुद्ध कार्य न करना चाहिये। ये भी मोटी चोरी में हैं। प्रकट होने पर कर्मबन्धन के अलावा लोक में प्रतीति भी नहीं रहती। अतएव त्याग किया जाय तो अधिक लाभ प्रद है।

(४) कूड़तुलकूड़माणे :—

कूड़ तोले, कूड़ मापे, खोटे माप-तोल रखे तो अतिचार है। किन्हीं गरीब या विश्वास करने वाले मनुष्यों को धान, सोना, चांदी कपड़ा आदि लोभ वश

वजन व नाप में कम देना या वेशी लेना बहुत निन्दनीय है। इससे बहुत हानि होती है। अतएव आत्मार्थी को त्यागना चाहिये। तराजू, पल्ला, काँटा, बटखरा, गज आदि में जानकर कोई काण कम वेशी रखने का त्याग करना चाहिये।

(५) तप्पडिरूवगववहारे :—

अच्छी वस्तु में खराब वस्तु मिलाकर अर्थात् वास्तविक जवाहरात सोना चाँदी के बजाय किसी को नकली वस्तु असली कीमत में बेचना, घी में चर्बी या वेजीटेबल घी मिला कर असली घी कहकर बेचना, शहद में शक्कर या चासनी मिला कर असली शहद कहकर बेचना, शक्कर में आटा, दूध में पानी आदि मिलाकर उसे अच्छी चीज बतला उसके बदले में नकली चीज देना

आदि कार्य महा निन्दनीय हैं। क्षणिक पौद्गलिक लाभ के लिए ऐसा कार्य कर अनन्तकाल भव भ्रमण करना उचित नहीं है। अतएव इसको पूर्णरूप से समझ, ऐसे कार्य का त्याग करना चाहिए।

आगार

कोई आगार रख कर त्याग करना चाहे तो अपनी धारणा प्रमाण आगार रख कर त्याग करे।

चौथा स्वदार सन्तोष परदार विरमण व्रत।

श्रावकों के लिए :—

(१) देवता देवाँगना से मैथुन सेवन का २ करण ३ योग से त्याग।

(२) मनुष्य तथा तिर्यंच तिर्यंचनी से मैथुन सेवन का १ करण १ योग से त्याग।

(३) निज स्त्री छोड़, दूसरी विवाहिता, विधवा, कुमारी स्त्री से मैथुन का त्याग। ......करण......योग से।

(४) निज स्त्री से दिन में मैथुन का त्याग। रात्रि की मर्यादा.........उपरांत त्याग।

(५) घर के टाबर, पुत्र, पौत्र, कन्या, पौत्री, दोहिता, दोहिती भाणजा, भाणजी, भतीजा, भतीजी छोड़ दूसरे का सगपण कराने का त्याग अथवा मर्यादा उपरान्त त्याग ....करण............योग से।

(६) वेश्या गमन का त्याग।

(७)............उम्र बाद विवाह का त्याग।

(८) विधवा विवाह का त्याग।

(६).........वय के नीची उम्र वाली निज स्त्री से मैथुन सेवन का त्याग।

श्राविकाओं के लिये:—

(१) देवता देवाँगना से मैथुन सेवन का २ करण ३

योग से त्याग यावज्जीवन।

(२) मनुष्य (निजपति छोड़), मनुष्यनी, तिर्यंच, तिर्यंचनी से मैथुन सेवन का ......करण......योग से त्याग।

(३) निज पति छोड़ दूसरे विवाहित, कुमार, अथवा विधुर पुरुष से मैथुन का त्याग।......करण......योग से।

(४) निज पति से दिन में मैथुन का त्याग। रात्रि की मर्यादा............उपरांत त्याग।

(५) घर के टाबर, पुत्र, पौत्र, कन्या, पौत्री, दोहिता दोहिती, भाणजा, भाणजी, भतीजा, भतीजी छोड़ दूसरे का सगपण कराने का त्याग या मर्यादा उपरान्त त्याग करण... ....योग से।

(६) जहाँ शील भंग का प्रसंग दीखे ऐसी जगह नौकरी या रोटी सट्टे रहना उचित

नहीं । स्व पुरुष के सिवा अन्य पुरुष अधीन कुशील अर्थे तनख्वाह या पुरस्कार प्रलोभन से रहने का त्याग ।

(७) एक से अधिक विवाह का त्याग । जहां तक अपना वश चलता हो, अपनी उम्र से तीन गुणी से अधिक उम्र वाले से विवाह न करना ।

(८) निज में पूर्ण वयस्का न होने तक पति के साथ सूई डोरे न्याय मैथुन का सउपयोग त्याग ।

ब्रह्मचारी निम्नलिखित बातों पर हमेशा विशेष रूप से ध्यान रखें :—

१—स्त्री सहित एकान्त शयनाशन का त्याग । अन्य स्त्री सहित मकानादि में रहने का यथाशक्ति परिहार ।

२—स्त्री के साथ आलाप संलाप का परिहार ।

३—स्त्री के साथ एकाशन का परिहार ।

४—स्त्रियों की मनोहर, मनोरम इन्द्रियों और अंग प्रत्यंगों के निरीक्षण और ध्यान का परिहार ।

५—स्त्रियों के नाना प्रकार के मोहक शब्द सुनने का परिहार।

६—पूर्व क्रीड़ा स्मरण परिहार।

७—विषय वर्द्धक आहार का परिहार।

८—अति आहार का परिहार।

९—शरीर विभूषा और शृंगार का परिहार।

१०—शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श सम्बन्धी विषयों के सेवन का परिहार।

जहाँ स्त्री शब्द आया है वहाँ स्त्रियों को "पुरुष" शब्द समझना चाहिये।

पाँचवाँ परिग्रह परिमाण व्रत

नव प्रकार के परिग्रह का मर्यादा उपरान्त त्याग अपनी शक्ति अनुसार करण और योग से करना चाहिए। परिग्रह ऊपर मूर्छा अर्थात् ममत्व भाव यथा संभव कम करना चाहिये।

(१) खेत्तु (क्षेत्र)—

खुली जमीन रहने के लिये व खेती के लिए............ बीघा से उपरान्त रखने का त्याग। जमींदारी अर्थे अर्थात् भाड़ा खजाना उपजाने के लिये ....बीघा जमीन से अधिक रखने का त्याग।

(२) वत्थु (वास्तु) मकान—

निज के रहने के लिए.........

मकान से अधिक मकान रखने का त्याग। एक २ जगह........ मकान से अधिक रहने के लिए रखने का त्याग तथा भाड़ा उपजाने के लिए वा व्यापार निमित्त निज का मकान..........जगह........मोट से अधिक रखने का त्याग। गोदाम, प्रेस, फैक्टरी आदि... से अधिक निजी रखने का त्याग। तथा भाड़ा उपजाने के लिए गिर्मट (लीज) में.......—से अधिक रखने का त्याग। जमिन्दारी या खेती कम्पनी का शेयर लेना हो तो—-कंपनी से अधिक का......—शेयर से अधिक लेने का त्याग।

(३) हिरण्य :—

चाँदी के बर्तन, असबाव तथा खुली चाँदी निज के लिये.......—तोला से अधिक रखने का त्याग।

स्त्री तथा लड़के लड़कियों के नाम से किसी भी समय ये सब चीजें अलग कर रखूं सो अलग। उस पर अपना कोई अधिकार कदापि न रखूंगा। इन सब चीजों का त्याग ऊपर में तोले के हिसाब से रखा है। साथ-साथ कीमत अर्थात् मूल्य खोलकर त्याग करे तो जिस दिन त्याग किया हो उस दिन के मूल्य के हिसाब से खोल रखे।

(४) सुवर्ण :—

सोने के बर्तन, असबाब, गहना व बिना गढ़ा सोना निज के निमित्त निजकी मिलकियत में.........तोला से अधिक और ....मूल्य से अधिक रखने का त्याग।

स्त्री, पुत्र, पौत्र, पुत्रवधू, कन्या, भगिनी आदि को जो सोने का गहना स्वेच्छा से दे दूँ तो उस पर कदापि ममत्व, स्वामित्व अधिकार न रखूंगा और वह मेरे मर्यादित वजन व दाम से बाहर होगा।

(५) धन :—

मोहर, गिन्नी, सिक्के शेयर, नगद रुपये, हीरे, मोती

जवाहरात आदि वर्तमान बाजार मूल्य से मोट..........रुपये से अधिक रखने का त्याग।

बाजार भाव घट बढ़ होने से मर्यादित मूल्य बढ़े तो बात न्यारी है। भाव घटने से कीमत घट जाय तो मर्यादित सीमा पूर्ति का प्रयास न करूँगा। व्यापारादि में जो निज की, रकम लगे वह इसी में शामिल समझी जायगी।

(६) धान्य :—

सब प्रकार का अनाज तथा घास चारा घर खर्च के लिए एक वर्ष में.......मण से अधिक संग्रह कर रखने का त्याग।

(७।८) द्विपद चौपद :—

(जहाँ दास-दासी स्व स्वामित्व में रखने का विधान हो वहाँ) वर्ष में........दास-दासी से अधिक अपने कब्जे में रखने का त्याग।

………गाय………बैल……भैंस

………हाथी……घोड़ा……घोड़ी

………बकरा……बकरी……मेष

………महिषी……ऊँट……साँढ़

से अधिक साल भर में रखने का त्याग। इन सब की वंश वृद्धि हो तो उसका आगार।

(९) कुप्य धातु :—

सोना, चाँदी छोड़ अन्य धातु तथा और बासन बर्तन घर खर्च के लिये हर एक प्रकार की कोई भी वस्तु में………से अधिक मूल्य की रखने का त्याग। किसी कारण-वश क्रीत मूल्य से बाज़ार भाव बढ़ जाने से दाम मर्यादा उप-रान्त हो जाय तो आगार।

किसी श्रावक के किसी रिश्तेदार की संपत्ति उत्तराधिकारी सूत्र से अथवा वसीयतनामे के जरिये मिले तो उसे रखने का आगार खोले बिना लेना उचित नहीं। इसलिये आवश्यकतानुसार आगार खोले।

उपरोक्त नव विधि मर्यादित त्याग के अतिरिक्त सांसारिक गृहस्थ को नीचे लिखी बातों पर ध्यान रख कर त्याग खोलना उचित है:—

व्यापार में सालाना निज का—

(१) ……रुपया उपरान्त लगाने का त्याग। दूसरे से कर्ज लेकर व्यापार हो तो…… तक से उपरान्त कर्ज लेकर व्यापारमें लगाने का त्याग। व्यापार में लगाया हुआ धन व माल, कर्ज लिये हुए सहित मर्यादा के अतिरिक्त हो सकता है, परन्तु उसके लभ्य से मर्यादित धन नहीं बढ़ने देना। व्यापार में लगाये हुए धन के अतिरिक्त निज का अलग धन………रुपये से अधिक प्रच्छन्न रखने का त्याग। व्यापार की वस्तु का मूल्य हठात् बढ़ने से अपनी मर्यादित संपत्ति से अधिक धन हो जाय तो आगार। आयन्दा उसको किसी को संपूर्णतया देकर अपनी मर्यादा से उपरान्त नहीं बढ़ने देना।

(२) घरेलू असबाब,

चेयर, टेबुल, कुर्सी, बिजली, पंखा, छप्पर-खाट, ढोलिया, माचा, संदूक, आलमारी, गलीचा, सतरंजी, बिछौना, तकिया तथा व्यापारिक सामान, कांटा, पल्ला बटखरा आदि हरएक प्रकार का साधन मोट ....रुपया तक के ऊपर का त्याग अथवा हरएक की संख्या खोले जिसके उपरान्त त्याग।

(३) जिनके ब्याज का काम है वे पांचवें व्रत में दूसरे को ब्याज पेटे............रुपया से ऊपर उधार देने का त्याग करें।

(४) जिनके हुँडी दिलाने, चिट्ठी, रकम, उधार दिलाने की दलाली का काम है वह ....से अधिक की किसी दिन उधारी हुँडी–चिट्ठी दिलाने की दलाली करने का त्याग करें।

छठा दिशि परिमाण व्रत

इस व्रत से उपरोक्त पाँचों अणुव्रतों की सीमा बहुत संकुचित हो जाती है। अतः इस व्रत को पाँचों अणुव्रतों का गुणवर्द्धक स्वरूप समझ अवश्य धारण करे।

(१) अपने निवास स्थान से सीधी रेखा में पूर्व में......... कोस, उत्तर में.........कोस, दक्षिण में.........कोस, पश्चिम में.........कोस, ऊर्द्ध.........कोस अधः.........कोस से उपरान्त निज में कोई भी स्वार्थ, लोभ, व्यापार के कार्य्य निमित्त जाने का व पंच आश्रव द्वारा सेवन का त्याग।

शासन सम्बन्धी कार्य्य के लिए आगार, तथा रोगादि निवृत्ति के लिए जाना पड़े तो आवश्यकतानुसार आगार उपरान्त त्याग करे। तथा पीड़ित आत्मीय के साथ व उनसे मिलने जाना पड़े तो आगार उपरान्त त्याग करे।

(२) व्यापार निमित्त वस्तु भेजना या मंगाना हो, तथा आदमी भेजना हो तो पूर्व ....कोस, उत्तर........... कोस, दक्षिण...........कोस, पश्चिम.... ....कोस, अधः........कोस ऊर्द्ध ....कोस। स्व ग्राम से...... तक की सीमाके बाहरका व्यापार करने का व व्यापार निमित्त आदमी भेजने का, बुलाने का त्याग, तथा उपरोक्त आगार उपरान्त किसी स्थान में कोई मकान, जमीन आदि तथा शेयर, डिबेंचर आदि लेने का त्याग।

(३) चिट्ठी, पत्री, तार, टेलीफोन, रेडियो आदि के सहारे कोई समाचार भुगताना हो तथा निज प्रयोजन निमित्त वस्तु मंगानी हो तो पूर्व........... कोस, पश्चिम........कोस, उत्तर .... कोस,दक्षिण...........कोस, ऊर्द्ध............कोस, अधः...........

कोसके बाहर किसी भी तरह की चिट्ठी, तार, सन्देश न भुगताये। पत्रवाहक आदि द्वारा मर्यादित क्षेत्र में कार्य्य कराने का त्याग।

उपरोक्त नं० (१) में, की हुई सीमा से बाहर निज में सुखे समाधे कोई भी आश्रव द्वार सेवन करने का त्याग तथा क्षेत्र (२) (३) से बाहर दूसरे के सहारे किसी प्रकार व्यापार, वाणिज्य, आरंभ, समारंभ आदि करने का त्याग। परन्तु स्वास्थ्य लाभार्थ रोगादिक का प्रतिषे-धक, औषध आदि तथा ज्ञान वृद्धि के लिए सुपाठ्य पुस्तकादि बाहर के क्षेत्र से मंगाने की मर्यादा करे, उसके आगार उपरान्त त्याग।

राज आदेश से अथवा दैव-योग से यदि मर्यादा की सीमा के बाहर जाना पड़े अथवा ले जाया जाय तो आगार।

छठे व्रत के अतिचार सदा ध्यान में रख कर टालता रहे।

सप्तम भोगोपभोग परिमाण व्रत

यह दूसरा गुण व्रत पाँच अणुव्रतों को और भी पुष्ट करता है। अतः इसका त्याग जरूर करना चाहिये।

(१) उल्लणिया विहि :—

शरीर पोंछने के लिए यावज्जीवन तक सूती देशी मिल का गमछा........खद्दर का गमछा........दोवटी का गमछा............तौलिया देशी............विदेशी............मिल या खद्दरका रूमाल................सूती..............रेशमी...............चद्दर सूती...............रेशमी............से उपरान्त व्यवहार करने का त्याग। १ करण १ योग से।

मर्यादित संख्या से अतिरिक्त किसी भी समय उपरोक्त चीजें निज शरीर अर्थे नहीं रखूंगा। मर्यादित वस्तु में यदि कोई फट जाय, गम जाय तो मर्यादित संख्या उपरान्त नया

लेने का आगार।

(२) दंतण विहि :—

दाँत साफ़ करने के लिए यावज्जीवन तक नीम, कीकर, तेजपत्र, मलेहठी, देवदारू, जामुन, बबूल आदि हरी या सूखी लकड़ी का तथा तेल, नमक, फिटकिरी, जीरा, नमक, कोयला चूर्ण, गंगा मिट्टी आदि का मंजन तथा कार्वलिक टूथ पाउडर, दन्त मञ्जन, खास प्रकार का उपरान्त अथवा अमुक-अमुक कम्पनी का बनाया हुआ, अमुक जगह का बनाया हुआ आदि छोड़ कर बाकी का त्याग।

संख्या व वजन खोले। जीभी............टूथ ब्रस आदि.... उपरान्त व्यवहार करनेका त्याग।

(३) फल विहि :—

मस्तक, केश धोने के लिए आँवला, अरीठा, नींबू आदि

फल अथवा खोपरा, माथा धोने का मसाला आदि जितना रखा हो उसे छोड बाकी त्याग ......करण.........योग से। वजन खोल कर त्याग करे।

(४) अभ्यङ्गण विहि :—

सरसों तेल, तिल तेल, नारियल तेल, बेला-चमेली, मसाले का अथवा रेंडी का तेल, सुवासित तेल, घृत, कविराजी तेल, चन्द्रप्रभा, भृंगराज, हिम-प्रभा, आदि का नाम खोले उस उपरान्त त्याग.........करण ....योग से।

वजन खोल कर बाकी त्याग करे।

(५) उब्वट्टण विहि :—

पिट्ठी, साबुन कपड़ा धोने की, देह में लगाने की खुशबूदार व कार्बलिक आदि, दही, छाछ, बेसन, खल, सोडा आदि जितने प्रकार रखे उसकी संख्या व वजन

खोले, जिसके उपरान्त यावज्जी-
वन त्याग.........करण............
योग से।

(६) मज्जण विहि :—

स्नान यावज्जीव तक किसी
भी दिन में............बार से
अधिक का त्याग।

हाथ, पैर, मुँह, सिर धोना
किसी भी दिन में.........बार से
अधिक का त्याग।

एक स्नान में............मण
जल से अधिक लगाने का
त्याग।

हाथ, पैर, मुँह, सिर धोने
के लिए किसी समय में............
सेर से अधिक पानी लगाने का
त्याग।

तालाव में, नदी में, कुएँ
में, हौज में डुबकी लगा कर
अथवा वहती टूँटी, परनाले नीचे
बैठ कर नहाने का त्याग।

समुद्र के पानी से नहाने का त्याग।

नदी, समुद्र, जलाशय, तालाब में स्नान करना पड़े तो किनारे बैठकर, अंजली, लोटा, बालटी से जल लेकर नहाने का आगार। अष्टमी, चतुर्दशी आदि को स्नान का त्याग।

हजामत महीने में......... उपरान्त त्याग।

(७) वत्थ विहि :—

वस्त्र ओढ़ने, पहरने के लिए यावज्जीव तक किसी भी समय सूती...रेशमी...ऊनी... आदि धोती.........गंजी...... फतुई......कोट......जाकेट... ...कमीज......चोला......... कुरता.........अंगरखी........ चपकन......... पतलून .... चौगा...... सेरवानी .... पेन्ट.........ब्रीजस..... हाफ-पेन्ट............पट्टी .... हाथ-

मोजा.......... मोजा ....

साफा..........पाग........हैट........

टोपी.......... कनपेट ....मफ-

लर..........मुंहपचि ....

जाड़िया.........शाल.........

दुशाला.........रजाई.........

दोहड़....... ..गूदड़ा ....

धौंसा...... आलवान ....

मलीदा...... तूस ...... बाला-

पोस..........ओमर कोट..........

कमरबन्द .... बैल्ट ....

से अधिक व्यवहार का त्याग ।

जनाना कपड़ा :— साड़ी

........कोट........कांचली ....

घाघरा..............लहंगा..........

बोड़ी गंजी..........मोजा..........

उपरान्त त्याग ।

फट जाने से, या खो जाने से दूसरा कराने का आगार । देशी विदेशी मिल का, खद्दर का, खोलकर रखे तो और भी ठीक । दाम खोलकर रखे कि

..........रुपये से अधिक का कोई एक समय न पहनूंगा तो उसके अनुसार त्याग करे। १ करण १ योग से।

केश विन्यास के लिए कांगसी (कंघई) ब्रस आदि ....से अधिक व्यवहार का त्याग।

(८) विलेवण विहि :—

शरीर पर चंदन, केशर, स्नो, क्रीम, पाउडर, सेन्ट, गुलाब-जल, अतर, कुंकुम, चावल, लाल चंदन, कपूर, मेंहदी, टीका, सिंदूर, हींगलू आदि लगाने का मर्यादा उपरान्त त्याग। १ करण १ योग से यावज्जीवन।

(९) पुष्फ विहि :—

सूंघने के निमित्त सचित्त फूल, गुलाब, चम्पा, कमल, जूही, बेला, चमेली, मोगरा, केवड़ा, हीना आदि का फूल,

माला, गजरा, आदि छोड़ बाकी का त्याग।

सूंघने की तमाखू, स्मैलिंग सान्ट आदि अचित्त वस्तुओं का नाम खोल के बाकी का त्याग। १ करण १ योग से।

(१०) आभरण विहि :—

यावज्जीवन तक निज शरीर पर कलंगी, सूत, बोताम, मुरकी, उपरकनिया, सिरेपेच, चौबन्दी, माला, टड्डा, अनंत, रिस्टवाच, चैन, लौंग, तागड़ी, अंगूठी आदि........गहना छोड़ और आभूषण शोभा के लिये पहनने का त्याग। अथवा......दाम के उपरान्त का आभूषण कोई भी समय पहरने का त्याग।

स्त्रियों के लिए :—बोर, चाँद, सूरज, सांकली, वाली, नथ, करणफूल, सुरलिया,

खांचा, पात, टिड्डीमलका, अंगूठी, हाथ सांकल, रिस्ट-वाच, चैन, तिमणिया, तेवटा, हार, अणत, बंगड़ी, चमक चूड़ी, गजरा, चूड़ी, पट्टा, टड्डा, तागड़ी, कड़िया, जोड़, नेवरिया, टणका, चाँदी सोने का खोले जिसके उपरान्त त्याग।

(११) धूप विहि :—

धूप खेने के लिए रखे तो नाम खोल कर (अगरबत्ती, घृत, धूप, लोवान, चिटकी इत्यादि) बाकी का त्याग यावज्जीवन।

(१२) पेज्ज विहि :—

चाय, दूध, रबड़ी, शर्वत, सोडा, लेमनेड, बर्फ, पानी, डाबपानी, काँजी बड़ोंका पानी, ठंडाई, गुलाब पानी, केवड़ा पानी आदि जो सब जितनी बार से अधिक एक दिन में व्यवहार करना उसका परिमाण कर बाकी त्याग।

मलाई बर्फ, कुलफी बर्फ, आइस्क्रीम, दूध दही की लस्सी आदि जो-जो फल के सिरप (सर्बत) आदि का नाम खोले उसके उपरान्त त्याग करे।

बर्फ पानी की मर्यादा करे जिसके उपरान्त त्याग।

(१३) मक्खन विहिः—

सूंखड़ी, मिष्टान्न, बादाम की बरफी, पिस्ते की बरफी, दाल का सीरा, आटा, मैदा, सूजी का सीरा, गुड़ का सीरा, गुड़ की लाफसी, चासनी की लाफसी, चूंटिया चूरमे का लाडू, हलवा, दाल का लाडू, पंचधारी का लाडू, मेथी का लाडू, मगद, चूरमा, बड़ा, दही बड़ा, तला हुआ सेका हुआ या भुना हुआ पापड़, तला हुआ चिड़वा, मावे की कतली, मेवे की खिचड़ी, जलेबी, बूंदिया बूंदिया का लाडू, बेशन का

लाडू व चक्की, शक्करपारा, दिलखुशाल, कलाकन्द, घेवर, पेठा, मावे का पेठा, पेड़ा, रस-गुल्ला, जामुन, छाना बड़ा, खीरमोहन, चमचम, काचागुल्ला, आम का पापड़, आमका सीरा, दूधपाक, दिलजानी, मोहनथाल, मीठी कचौड़ी, बालुशाही, मलाई, कूंमड़े का पेठा, तिल पापड़ी, बेल का मुरब्बा, अमरती, मोतीपाक, खाजा, मिश्री-मावा, फिड़ी, नुकती, मठड़ी, खस्ता कचौड़ी, दूध, रबड़ी, खुरचन, सिंघोड़ा, पूड़ी, कचौड़ी, टिकड़ा, मालपुआ, चीलड़ा, भुजिया, बकतादाल, तला हुआ खिचिया, गवारफली, चबीणा, चनाचूर, दालमोठ, चासनी का चना, महलमालिया, खीर, कमला नीबू का सन्देश आदि मिष्टान्न पकवान रखना हो तो नाम खोल लें व संख्या खोल

लें,.........उतने से अधिक का त्याग यावज्जीवन।

जो सब मिष्टान्न कदापि भी नहीं खाना हो उसका त्याग जरूर करें।

(१४) ओदण विहि :—

गेहूं, चणा, ज्वार, बाजरा, मोठ, चावल, सिंघोड़ा, फाफरा, मक्की की गूघरी, फटोलिया, भात, घाट, दलिया, ढोकला, फल, फूली आदि जो रंधी हुई खाने की चीजों की मर्यादा रखे, उससे अधिक का त्याग यावज्जीवन।

(१५) सूपविहि :—

दाल—मूंग की, मोठ की, चने की, रहड़ की, कसारी की, काली कलाई की, मसूर की, चंवले की, मटर की आदि एक तरह की या मिश्रित दाल तथा झोलदार पदार्थ, जिसके सहारे ओदन जिमा जासके, उसका नाम

खोले, उसके उपरान्त त्याग यावज्जीवन तक।

(१६) विगय :—

घृत, तेल, दूध, दही, मिठाई व कड़ाई विगयका प्रमाण ....से उपरान्त त्याग। मद्य, माँस महा विगय का सर्वथा त्याग। मधु मक्खन का........ प्रमाण से उपरान्त त्याग।

कड़ाई विगय में तला हुआ हर एक प्रकार का सामान तथा हरएक मिष्टान्न आ जाता है सो ऊपर में त्याग किया है। इसे सूत्र में घयविहि कहा गया है। घृत—गाय का, भैंस का, वेजिटेवल आदि जैसा रखे उस उपरान्त त्याग करे।

(१७) सागविहि :—

श्रावक को जमीकन्द जैसे लहसुन, कांदा, आलू, बिठ, कशेरू, मुथा, सकरकन्द, मान-

कचु, ओल, गाजर, मूली, आदा, सटी आदि अनन्तकाय का सर्वथा त्याग करना चाहिये। हरे साग के नाम यथा चँवले की फली, हरा चना (होला), मटर, काकड़िया, तरकाकड़ी, तोरूँ, लाउ, खरबूजा, भिंडी, लवलव, मतीरा, करेला, ककरेला, परवल, टींडसी, काचर, सांगरी, मूलं की पत्ती, मटर पत्ती, चंदलोई, फूलगोभी, बन्दगोभी, सलगम, पोदीना पत्ता, धणिया पत्ता, मेथी पत्ता, कैर, सुवा, पालक, सरसों पत्ती, पाट पत्ता, तुलसी पत्ता, गवारपाठा, हरी मिरच, हरी सौंफ, इमली, टमाटर, कमलनाल, भुट्टा, सिट्टा, खीरा, नींबू, पान, करूँदा, जलपाई, छीम, सजना, डंठा, हरी सुपारी, फलखंडकी भूजी, गुवारफली इत्यादि। इतने उपरान्त........आगार रख कर बाकी का त्याग। अचार कितने

दिन उपरान्त का व क्या २ तरह का खाना सो खोलकर बाकी त्याग। हरी वस्तुका नाम व संख्या रखे सो खोल ले बाकी का त्याग करे। सूखा साग जैसे मेथी, खारक, किसमिस, अमचूर, सांगरी, कैर, मे, आमली, गवारफली, मोठफली, फोफलिया, पापड़, मोगर, हवेली, कोकला, काचरी, सूखा आलू, सूखा कांदा, खेलरा, मतीरे का छूँतका, काकड़िये का छूंतका, सूखी मूली, सूखा मेथी पत्ता, बड़ी, सिरावडी आदि जो रखे सो खोल ले बाकी का त्याग करे।

(१८) माहुर विहि :—

हरा केला, आम, अमरूद, सीताफल, कमरंगा, पानीफल (सिंघोड़ा), अनारस, कमला नींबू, मौसमी, बिजौरा, बेल, अंजीर, बोर, मतीरा, फालसा,

जाम, कालाजाम, पपीता, ईख (सांठा), अंगूर, नासपाती, सेव, सरदा, दाड़िम, अनार खंदारी, सूखा बादाम, पिस्ता, खजूर, छुहारा, काँजू, किसमिस, अख-रोट, खुरमानी, मुनक्का दाख, चीना बादाम इन सब का आगार रखे सो खोल ले, बाकी का त्याग यावज्जीवन । निजके खाने पीने के लिये फल आदि सुखाकर, सूखा साग, फल,तर-कारी बनाना हो तो जिस जिस का जितना आगार रख सो खोल कर, बाकी निजमें सुखाने का या कहकर दूसरे से सुखवाने का त्याग करना चाहिये ।

(१६) जेमण विहि :—

हर प्रकारकी भोजन सामग्री रोटी, बाटी, बिस्कुट, बड़ा, पतौड़ आदि..........उपरान्त व ....संख्या उपरान्त त्याग। तथा दूसरे के यहाँ भोजन की

मर्यादा करे। बडे जीमनवार के भोजन की मर्यादा करे जिस के उपरान्त त्याग। दिन में.... बार के उपरान्त जीमने का मर्यादा उपरान्त त्याग करे।

(२०) पाणिय विहि :—

कच्चा व पक्का पानी हर तरह का कुआ, तालाव, वर्षात, नदी आदि का.........प्रकार से उपरान्त त्याग। बरफ, वर्षा का ओला, गड्डा आदि का मर्यादा उपरान्त त्याग करे।

(२१) मुहवास विहि :—

पान, सुपारी, इलाइची, लौंग, चूर्ण, गोली, मुलेठी, पीपरमेंट, जायफल, सौंफ, धाना, खाटा, पिपल, सौंठ, गोलमरिच अजवान.........प्रकार से उपरान्त त्याग। वजन आदि खोले जिसके उपरान्त त्याग।

(२२) वाहन विहि :—

रेल, मोटर, मोटर साइकिल, तांगा, फिटन, इक्का,

रिक्सा, ट्राम, बस, पालकी, डोली, गोयान, ऊष्ट्रयान, साइ-किल, साइकिल रिक्सा, नाव, स्टीमर, घोड़ा, हाथी, ऊँट आदि जो वाहन रखे उसका नाम खोले जिसके उपरान्त त्याग। हवाई जहाज का त्याग सर्वथा अथवा साल में............बार से अधिक उस पर चढ़ने का त्याग।

(२३) शयन विहि :—

पाट, बाजोट, कुर्सी, बैंच, माँचा, ढोलिया सोफा, पाटा, चौकी, बिछौना, बालस, सत-रंजी, कारपेट, टेबल आदि ....से अधिक का त्याग विगतवार। विवाह शादी में महफिल आदि की मर्यादा उपरान्त त्याग या सम्पूर्ण त्याग करे।

(२४) पन्नी विहि :—

बूट, चट्टी, चप्पल, जूता, मोजा, खड़ाऊँ आदि दैनिक... से अधिक का त्याग।

(२५) सचित्त विहि :—

इस तरह की सचित्त वस्तु भोजन या मुँह में डालने में आवे उसका सदा संख्या व वजन............से उपरान्त त्याग।

(२६) द्रव्य विहि :—

खाद्य पदार्थ की मर्यादा याने............संख्या व वजन से अधिक कोई भी दिन भोगने का त्याग। अचित्त द्रव्यों में छाता, फाउन्टेन पेन, कलम, पेनसिल आदि द्रव्यों का मर्यादा उपरान्त त्याग।

सप्तम व्रत का आगार

शारीरिक अस्वस्थता के कारण औषधादि उपचार में यदि कोई मर्यादित वस्तु के बाहर की वस्तु भोगनी पड़े तो आगार। उपरोक्त वस्तुओं की मर्यादा सो यावज्जीवन तक १ करण १ योग से त्याग। यदि २ योग से त्याग करे तो अपने घर वाले, मेहमान, बंधुगण के भोगोपभोग के लिये जो कुछ व्यवहार की जाय वह आगार। तथा भेल संभेल हो जाय, अजाण में अदल बदल हो जाय तो आगार। त्याग करते समय यह जरूर ख्याल रक्खे कि जो चीज छोड़ने से गृहस्थ का काम चल सकता है उसे तो सर्वथा त्याग ही दे।

॥ १५ कर्मादान ॥

इंगालकम्मे (अंगालकर्म):--

व्यापार निमित्त, लोहार, सोनार, भड़भूंजा, कुंभार, ईटों का भट्ठा, दियासलाई बनाना, कपड़ा धोनेका व्यापार, साबुन बनाने का व्यापार, चार बनाना, चूना पकाना, लकड़ी जलाकर कोयला करना, पत्थरके कोयले से कोक बनाना तथा प्रेस, मशीन आदि का व्यापार करने का त्याग।

अगर कोई आगार रखना हो तो सालभर में............के उपरान्त का त्याग।

औषध बनाकर बेचने के लिए धातु भस्म, तैलादि पाक, तथा अन्य प्रकार की डाक्टरी, कविराजी, हकीमी दवा आदि बनाकर बेचने का त्याग।

(२) वणकम्मे (वनकर्म) :—

हराफल, फूल, घास, वृक्ष, लता पत्रादि के व्यापार का त्याग।

पाट, सन, मूंज धान्यादि के व्यापार का आगार रखना हो सो खोले जिसके उपरान्त त्याग करे।

हरा साग सुखाने का आगार रखना हो तो आगार खोले जिसके उपरान्त त्याग करे।

जिस धान्य का व्यापार न करे सो खोल कर त्याग करे। जमीकन्द के व्यापार का सर्वथा त्याग करे अथवा मर्यादा उपरान्त त्याग करे।

जड़ी बूटी आदि के व्यापार निमित्त—दवा बनाने के लिये व्यापार करने का त्याग।

(३) साड़ीकम्मे (शकटकर्म):—

गाडी, इक्का, धुरी, पैड़ा, रथ, पालकी, मोटर, मोटरबस, पलंग, गाडी के अन्य अंश,

चाकी, पाट-बाजोट, कुर्सी, आलमारी, फर्नीचर, चौकट, जाली, झरोखा, तीर (संथीर) बरगा (कड़ी), कपाट, थंभा बनाने के, बेचने के व्यापार का त्याग या मर्यादा उपरान्त त्याग।

(४) भाड़ीकम्मे (भाटककर्म):—

मोटर, लारी, गाडी, घोड़ा, हाथी, रथ, ऊँट, दूसरे को भाड़े पर चलाना, जहाज, नाव, डोंगी, फ्लेट, साइकिल, मोटर साइकिल भाड़े पर देने का त्याग। अथवा नोहरा, दूकान, मकान, प्रेस, फैक्टरी, भाड़े पर देने या भाड़े पर लेने का आगार उपरान्त त्याग।

निज में अन्य व्यापार के सहारे ये सब चीजें रखे तो मर्यादा उपरान्त त्याग।

तथा कितनी दूर तक के लिये भाड़े पर देना माहल का

आगार रखे उस आगार उप-
रान्त त्याग।

व्याज पर रुपया देना हो
तो साल में..........रुपये से
अधिक खाते पेटे गिरवी (बंधक)
रख कर उधार लगाने का त्याग।

अपने व्यापार से अधिक
रकम बैंक आदि में जमा रहे,
चालू खाते रहे, सामान्य व्याज
में जिसकी मर्यादा की हो
उसके उपरान्त जमा रखने का
त्याग।

(५) फोड़ी कम्मे (स्फोटकम):—

भूमि प्रस्तर को खोदना,
फोड़ना, सुपारा, नारियल,
बादाम, अखरोट तोड़ कर बेचना
तथा अन्य धान्यादि दल कर,
पीस कर बेचना इन सब चीजों
के व्यापार का त्याग अथवा
मर्यादा उपरान्त त्याग।

घर निमित्त आगार रखे
सो खोलकर त्याग करे अथवा

जितना आगार व्यापार के लिए
रखे उसके उपरांत त्याग।

(६) दंत वाणिज्जे (दंत वाणिज्य):—

हाथी दांत, कस्तूरी, सीप,
मोती, सींग, चर्म, नख आदि
के व्यापार का त्याग अथवा
मर्यादा उपरान्त त्याग।

(७) केश वाणिज्जे (केश वाणिज्य):—

ऊन, चमर तथा ऊँट, गाय,
गधा, घोड़ा, भैंस, हाथी, रेशम
आदि के व्यापार का त्याग।

घरेलू पालित पशु व उनके
केश बेचने का आगार अथवा
मर्यादा उपरान्त त्याग।

(८) लक्ख वाणिज्जे (लाक्षा वाणिज्य)

लाख, चपड़ी, आल, कसुँबा,
राँगण आदि के व्यापार का व
रोगन, वार्निस, रँग बनाने व
बेचने का त्याग अथवा मर्यादा
उपरान्त त्याग।

(९) रस वाणिज्जे (रस वाणिज्य):—

घृत, तेल, गुड़ खांड़, दूध, दही, मद्य, मधु, माँस, चर्वी के व्यापार को रस वाणिज्य कहते हैं। चर्वी मद्य मांस आदि के व्यापार का त्याग।

मधु कढ़ाकर वेचने का त्याग।

बाकी वस्तुओं का व्यापार में त्याग करना हो सो सर्वथा त्याग अथवा आगार रखे तो ………मर्यादा उपरान्त त्याग।

(१०) विष वाणिज्जे (विष वाणिज्य):—

अफीम, सोमल, खार, आदि विष के व्यापार का त्याग।

तथा हरएक प्रकार के शस्त्रास्त्र के व्यापार का त्याग अथवा आगार रखे तो मर्यादा उपरान्त त्याग।

(११) जन्त पीलण कम्मे (यन्त्र पीलन कर्म):—

तिल, सरसों, राई, रेंड़ी, मूंगफली बादाम, तीसी, नारियल आदि सचित्त पदार्थ पिलवा

कर तेल निकला कर व्यापार करने का त्याग।

घाणी, मशीन, जिन फैक्टरी, जलयन्त्र—अरघट्ट आदि के काम का त्याग।

अगर आगार रखना हो तो मर्यादा उपरान्त त्याग।

घर खर्च के लिए आगार ....तक।

(१२) निल्लंछण (कम्मे निर्लाछन कर्म) :—

बैल आदि को नपुंसक बना कर, नाक, कान छेदना, भेदना, चिरवा कर उनसे व्यापार करने का त्याग।

डाम देने आदि व्यापार का त्याग।

घर के टाबर तथा घर के पशुओं के नाक कान छेदन कराने का आगार।

(१३) दवग्गिदावणया कम्मे (दवाग्नि कर्म) :

वन, पर्वत में आग लगाने का त्याग।

लोभ व राग द्वेष वश
अपना या अन्य का घर या
कोई वस्तु आग से भस्मीभूत
करने का त्याग।

(१४) सरदहतलावसोसणया कम्मे (सरद्रह तालाव शोषणिया कर्म) :—

नद, नदी, समुद्र, कूपादि
की पाल तोड़ने का त्याग।
कुवा, बावड़ी, नद, नदी, द्रह
का पानी शोषण कराने के
ठेका आदि व्यापार का त्याग।

एक तालाव का पानी
दूसरे में नल द्वारा व्यापार या
रोजगार के लिये लाने का
त्याग। तालाव भरती या
शोषण के व्यापार का त्याग।

परन्तु निज की जमीन,
ऊँची, नीची हो उसे समभूमि
बनाने के लिए यह सब करना
पड़े तो तथा कोई आदमी कुवे
में गिर गया हो तो उसे बचाने
के लिए पानी निकालने

का आगार। अथवा खेती सींचने के लिए आगार। नाला, मोरी, टूंटी आदि खोलने की मर्यादा। स्व गृहादि रक्षणादि निमित्त जैसा आगार रखे उसके उपरांत त्याग।

१५) असईजणपोसणया कम्मे (असतीजन पोषणिया कर्म):---

आजीविका निमित्त कोई भी वेश्या, नट, नटी, भाँड़ आदि को तनख्वाह देकर या हिस्सा देकर नही रखूंगा। तथा घोड़ा कुत्ता, बिल्ली, मोर, कूकड़ा, तोता का पोषण व्यापार के लिये न करूंगा। तथा रोजगार, लाभ व्यापार निमित्त असंयति जीव का पोषण न करूंगा। उपरोक्त व्यापार का जो त्याग २ करण ३ योग से न किया हो, १ करण १ योग से किया हो तो ऐसे कार्य करने वालों को ऐसे व्यापार निमित्त जानकर व्याज पर रकम देने का त्याग करे।

इनके अतिरिक्त निम्न-लिखित विषयों का त्याग करना उचित है—

(१) जुआ, फाटका, सट्टा, आखर लगाना, घुड़दौड़, कुत्ता दौड़, खेल की हार जीत, तास पासा, चौपड़ पासा, कौड़ी डाल कर हार जीत करने का त्याग।

(२) नशा, भाँग, मद्य, गांजा, चरस, कोकीन आदि मादक द्रव्य का त्याग। दवा पानी में आगार।

(३) पंचेन्द्रिय जीव को पीलकर या मारकर कोई दवा बनी हो तो उसे खाने का त्याग। अभ्यंगन अर्थात् मालिस के लिये गाढ़ा गाढ़ी करने में आगार रखना हो तो खोले जिसके उपरान्त त्याग करना।

(४) निज स्वार्थ के लिये दूसरे ग्राम जाने से ३ तीन दिन

से उपरान्त बिना दाम लकड़ी पानी भोजनादि दूसरे का नहीं लेना, सुखे समाधे।

(५) सरवाले, जीमनवार की हाँती या रकेबी आदि लेने का त्याग या मर्यादा उपरान्त त्याग।

आगार

(१) वस्त्र बनाने वाली, चट्टी—बोरा बनाने वाली, भाड़े के व्यापार वाली, हर धातु निमित्त वस्तु बनाने वाली, चाय व खेती वाली कंपनी का शेयर, डिबेंचर आदि........तक का लेने का आगार उपरान्त त्याग।

(२) ७ वें व्रत के भीतर की चीज अगर घर वास्ते ली हो तो वह बच जाने से बेचने का आगार।

(३) नौकरी करते हुए मालिक के आदेशानुसार हर एक व्यापार करने का आगार। परन्तु निज का त्यागा हुआ व्यापार करने के लिए मालिक को उत्साहित नहीं करूँगा।

(४) आढ़त व दलाली लेकर दूसरे के फरमाइस मुजब कारबार करने का आगार। परन्तु मद्य मांस आदि का व्यापार किसी भी हालत में नहीं करूँगा।

(५) व्याज निमित्त रकम देकर कोई वस्तु अडाने रखी हो (जिसके व्यापार का त्याग किया है)—उसे बेचने का आगार।

अष्टम अनर्थ दंड विरमण व्रत

पाप दो तरह से लगते हैं, एक अर्थ पाप और दूसरा अनर्थ या व्यर्थ पाप। ऊपर सात व्रतों में अर्थ और अनर्थ दोनों तरह के पाप खुले थे। यह आठवाँ व्रत अनर्थ पाप को रोकने वाला है। आठवाँ व्रत सरल भी है और कठिन भी। सरल तो इस दृष्टि से कि इसमें सिर्फ अनर्थ (व्यर्थ) पाप का त्याग होता है और कठिन इसलिये कि अधिकतर पाप प्रायः उपयोग की खामी से लगते हैं। इसलिये व्रतधारी श्रावक को इसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिये।

अष्टम व्रत लेते समय विशेष उपयोग पूर्वक लेना चाहिए। क्योंकि और व्रतों में तो स्वकार्य हेतु आगार रख कर लोग व्रत पालन करने की सुगमता कर लेते हैं। परन्तु यह व्रत तो जहाँ कोई स्वार्थ नहीं ऐसे मौके पर ही मन, वचन, काया की असावधानता व उपयोगाभाव से जो अपध्यान, प्रमाद, हिंसोपदेश तथा शस्त्रास्त्र का लेनदेन किया जाता है उसके पाप से आठ प्रकार आगार उपरान्त का त्याग करके अनर्थ दण्ड पाप से बचने के लिए है। यह व्रत लेते समय करण व योग विशेष विचार कर रखना। १ करण १ योग से तो व्रत लेना ही उचित है। इससे अधिक करण व योग विचार कर लेना जिससे उसके अनुसार पालन हो सके। व्रत लेकर यथायथ पालन करने पर ध्यान रखना सर्वदा उचित है। आठ प्रकार आगार:—घर निमित्त, न्यातीला निमित्त, मित्र बंधु बांधव निमित्त, राजा के निमित्त, यक्ष देवादि निमित्त, कोई संस्था के लिए जो कुछ किया जाता है वह तो अर्थ दण्ड है इनके अलावा अनर्थ दण्ड है। आगार रखना हो तो खोल

कर, त्याग करे। गृहस्थ के प्रयोजन अनुसार क्षेत्र, वास्तु, धन, धान्य, तथा उपभोग परिभोग की सामग्री का नियम व आगार का दिग्दर्शन यथा स्थान कराया गया है। निज प्रयोजन व स्वार्थ विना भी नाना प्रकार के कार्य से श्रावक को पाप लगता है। उसे रोकने के लिए अनर्थ दण्ड विरमण व्रत बताया गया है। इसके चार मुख्य भेद— १ अपध्यान २ प्रमादाचरण ३ हिंसकार्पण और ४ पाप कर्मोपदेश है। इन चारों से यथा संभव बचे रहना चाहिये। इनका कुछ स्वरूप नीचे लिखते हैं सो ख्याल करके व्रत लेना उचित है। प्रथम अपध्यान। अपध्यान के २ भेद हैं। १ आर्त्तध्यान व २ रौद्रध्यान।

आर्तध्यान :—

इष्ट वियोग, अनिष्टसंयोग में दीनभाव से रोदन नहीं करूँगा। निज की अथवा आत्मीय स्वजन की कठिन पीड़ा यथाशक्ति समभाव से सहन करूँगा और वृथा चिन्ता आर्त्तध्यान नहीं करूँगा। रौद्र ध्यान का विषय नीचे वर्णित है। उपरोक्त कार्य आ पड़ने से यतना से कार्य करना व समभाव से कष्ट सहना।

रौद्र ध्यान :—

क्रोध, लोभ, भय, मोह, आदि के कारण दूसरे की हानि

के लिए तल्लीन होना रौद्र ध्यान है। किसी कष्ट में पड़े हुए प्राणी को देख कर सुख नहीं वेदना चाहिए।

किसी के वध, बंधन, हिंसा, चति के लिए कोई कार्य्य किसी से नहीं करवाना चाहिए। झूठी साख, झूठी बात को सच्ची ठहराना, सच्ची को झूठी ठहराना, दूसरे की वस्तु चोरी हो जाय, नष्ट हो जाय, किसी की मृत्यु हो जाय, हार हो जाय ऐसा विचार न करना चाहिए।

हास्य, मजाक, कुतूहल में किसी की चीज छिपाने से उसके मन में दहशत पड़ती मालूम हो तो ऐसी लुकाछीपी नहीं करनी चाहिए।

दूसरा प्रमादाचरण :—

प्रमाद के ५ भेद हैं।

मद्य, विषय, कषाय, निद्रा

विकथा । इनका विस्तृत विवेचन नीचे है। साधारण-तया घृत, तैल, मधु, चासनी आदि का पात्र जानवूझ कर खुला न छोड़ना। आगार उप-रान्त इसका त्याग करे। अचित्त भूमि रहते सचित्त पर चलना, व चीजें रखना, आदि उपयोग सहित त्याग। जानवूझकर कोई तालाव, कुंड, कुवे की सारण, नदी तट पर मल मूत्र त्याग ऐसी रीति से नहीं करूँगा कि जिससे उनका पानी गन्दा हो। मुसाफिरी व जलयात्रा में आगार। अन्य जगह रहते हुए उपयोग सहित कुंथुआ, लीलण-फूलण युक्त जमीन पर चलने का त्याग। निर्जीव पात्र रहते लीलण-फूलण वाला पात्र वरतने का त्याग। ऐसी जमीन पर स्नानादिक कार्य्य उपयोग सहित करने का

त्याग। कपाट, खिड़की आदि बिना देखे उपयोग सहित बंद करने व खोलने का त्याग। बिना कारण वृक्ष के पत्र, पुष्प, डाल, आदि उपयोग सहित तोड़ने का त्याग। बिना कारण कोई दीपक, चूल्हा, भट्ठी, धुनी में अग्नि प्रयोग उपयोग सहित करने का त्याग। बिना कारण किसी पशु पर उपयोग सहित प्रहार करने का त्याग। बिना कारण किसी को कठोर, मर्मभेदी वाक्य उपयोग सहित कहने का त्याग। विवाह, होली आदि के उपलक्ष में, गाये जाने वाले गीतों में गंदी बातें अथवा गालियाँ बोलने का त्याग। तथा रंग, जल, गुलाल डालने का मर्यादा उपरान्त त्याग। आगार उपरांत रात में रसोई, पीसना, दलना, कपड़ा धोना, स्नान करना

आदि का उपयोग पूर्वक त्याग।

अयतना से जहाँ-तहाँ, खास कर जहाँ साधु सतियाँजी विराजें वहाँ, उपयोग सहित श्लेष्मा, कफ, मलमूत्र के उत्सर्ग का त्याग जरूर करना चाहिए। शहरों में पाखाने, मूत्राशय में मलमूत्र उत्सर्ग करने से बहुत जीव-घात होता है। अतः सुखे समाधे उसका मर्यादा उपरान्त त्याग करें।

तीसरा हिंसा कार्पण :—

हिंसाकारी अस्त्रशस्त्र अपने मतलब विना दूसरे को उपयोग सहित न दूँगा। यथा—राह चलते हुए को तमाखू पीने के लिए अग्नि तथा चक्कू, कंटारी, ऊँखल, मूसल, हमामदस्ता, घट्टी, सिल, लोढ़ा, सरोता, चून्हा, तलवार, तमंचा, बन्दूक, हल, कुदाल, गंडासी, कुल्हाड़ी, फरशी, भाला, तीर-

धनुष, बुहारी, पंखा, आदि वस्तु जिनसे जीवघात संभव है सो बिना मतलब हर कोई को उपयोग सहित न दूँगा। अड़ोसी-पड़ोसी, स्वजन, बन्धु-बान्धव, जिनसे परस्पर के सांसारिक कार्य्य—ऐसी वस्तुएं उधार लेने देने—का सम्बन्ध हो उन्हें छोड़ और हर कोई को ये सब चीजें जानबूझ कर आरंभ, समारंभ का कारण जानते हुए उपयोग सहित न दूँगा।

चौथा पाप कर्मोपदेश :—

किसी दूसरे को बिना मतलब यह नहीं कहना कि खेती करो, वृष को बैल बनाओ, घोड़ों को फेरकर तैयार करो, वैरियों को दवा दो, कल कब्जे यंत्रादि चलाते रहो, अस्त्रशस्त्र में शान दे रखो, वर्षा-ऋतु आ गयी अब कचरा जला दो, हलादि तैयार रखो, समय जा रहा है बीज वपन करो, तुम्हारी कन्या बड़ी हो गई है, अब उसके विवाह की तैयारी करो, नदी का पानी बढ़ रहा है नौकादि तैयार कर सजा रखो, आदि ऐसा बिना स्वार्थ दूसरे को उपदेश न दूँगा।

नवाँ सामायिक व्रत

श्रावक गृहस्थी है अतः आदेशउपदेशादि द्वारा मन

वचन काया का योग सर्वदा सावद्य कार्य्य में प्रवर्तता रहता ही है। इसलिये प्रत्येक दिन कुछ समय तक सावद्य व्यापारका त्याग करके धर्म प्रवृत्तियों में लगे रहना सामायिक व्रत का मुख्य उद्देश्य है। इसमें सावद्य योगका त्याग कृत कारित भेद से होता है। अर्थात् नतो कोई सावद्य कार्य्य स्वयं ४८ मिनिट (२ घड़ी = १ मुहूर्त) तक करना न कराना, मन से वचन से और काया से। साधु मुनि-राजतो यावज्जीवन सावद्य योग का त्रिकरण त्रियोग से त्याग करते हैं। परन्तु गृहस्थ को आरंभ समारंभादि सावद्य व्यापार किये विना सांसारिक कर्त्तव्य हो नहीं सकता। अतः कम से कम १ सामायिक अर्थात् दिन रात के २४ घंटों में ४८ मिनिट काल समस्त सावद्य व्यापार छोड़ कर

धर्मध्यान में लगे रहने से वह समय आत्म कल्याण के लिये सार्थक होता है।

सुखे स्वास्थे प्रत्यह एक सामायिक का नियम अवश्य ले। किसी दिन एक सामायिक न हो तो दूसरे दिन दो करना। अन्यथा किसी द्रव्य का त्याग करना। गाँव गाँवांतरे, मुसाफिरी में अस्वस्थता के कारण आगार रखे जिस उपरान्त सामायिक का बन्धा करे। अथवा एक सामायक बिना भोजन करने का त्याग करे सुखे समाधे।

दशवाँ देशावकाशिक व्रत

(१) छट्ठा व्रत यावज्जीवन तक जो धारण किया है उसमें नित्य फिर संकोच करना।

(२) सातवें व्रत का जो यावज्जीवन पर्यंत नियम लिया, उसमें सदा के लिए त्याग किया है। फिर भी प्रत्येक दिन के लिए अधिकतर संक्षेप चौदह नियम चितारते समय कर लेना चाहिये।

(३) रात्रि भोजन, नवकारसी आदि की मर्यादा। अष्टमी, चतुर्दशी को उपवास तथा अन्य तिथियों में पोरसी।

(४) एक बार भोजन कर चुकने पर दूसरी बार भोजन न करने के समय तक के लिये दो चार घड़ी का त्याग। उपयोग सहित।

(५) प्रति दिन पाँच, दस मिनट संवर करने की आदत डाले।

(६) रात भर के लिये अठारह पाप का त्याग करने को रात्रि संवर कहते हैं। रात्रि संवर दिन में भोजन करने के बाद किया जा सकता है।

(७) घड़ी दो घड़ी मौन धारण करना अर्थात् सावद्य बात बोलने का त्याग।

(८) चौदह नियम नित्य धारें।

नाम :—

१ सचित्त—मिट्टी, पानी, अग्नि, वनस्पति, फल, फूल, छाल, काष्ट, मूल, पत्र, बीज, त्वचा तथा अग्नि प्रमुख अन्य शस्त्र न लगा हो वे इलायची, लौंग, बादाम इत्यादिक सचित्त का वजन धारना।

२ द्रव्य—धातु वस्तुकी शली तथा अपनी अंगुली के सिवाय जो वस्तु मुख में दी जाती है सो सर्व द्रव्य की गिनती में आती है। नामान्तर, स्वादान्तर, स्वरूपान्तर, परिणामान्तर, द्रव्यान्तर होने से द्रव्यान्तर होता है। जैसे गेहूँ एक द्रव्य है किन्तु उसकी रोटी, फीणा रोटी, वेढवा रोटी और बाटी यह सर्व द्रव्य जुदा कहे जाते हैं। इसी प्रकार भात दाल, रोटी, मांड़िया, पलेव, तरकारी, पापड़, खीचिया, लड्डू, फीणी, घेवर, खाजा इत्यादि। यहाँ उत्कृष्ट द्रव्य का नाम रखे तो एकही द्रव्य कहा जाता है। जैसे मेवे की खिचड़ी अनेक द्रव्य निष्पन्न है किन्तु नाम लेकर रखने से एक ही द्रव्य है।

३ विगई—दूध, दही, घी, गोल, (चीनी गुड़) तेल तथा जो चीज कढाई में तली जाय उसका परिमाण करना ।

४ वाणह—पगरखी अथवा जोड़ी तथा मोजा, चट्टी, खड़ाऊ (जो पाँव में पहनें जायं) का परिमाण करना ।

५ तंबोल—पान, सुपारी, इलाइची, लवंग चूरण, गोली, खाटा, इत्यादिक का वजन बाँध परिमाण करना ।

६ वत्थ—वस्त्र (रेशमी, सूती, शन तथा ऊनकी पगड़ी, टोपी, कोट, जाकिट, गंजी, चोला, कमीज, धोती, पाजामा, दुपट्टा, चद्दर, शाल, अङ्गोछा और रूमाल) मर्दाना, जनाना कपड़ा वगैरह की गिनती रख परिमाण करना ।

७ कुसुम—जो वस्तु नाकमें सूँघने में आवे उसके तोल का प्रमाण करना । उदाहरण—फूल, फूल की चीजें जैसे—माला, हार, गजरा, तुर्रा सेहरा, पंखा, सिमया, अतर तेल, सेण्ट, घी, छींकणी वगैरह का नियम करना ।

८ वाहण—चलता, फिरता, तिरता, उदाहरण—हाथी, घोड़ा, ऊँट, इक्का, गाडी, रथ, पालकी, रिक्सा, रेल, ट्राम, साईकल, मोटर, मोटर साईकल, उड़ना जहाज, नाव, और बोट वगैरह का नियम करना ।

९ सयण—सोने की शय्या, पाट, पाटला, बिछौना, कुरसी, चौकी, पलंग, छपर खाट, मेज तखत, सुखा सन, सतरंजी, जाजम, गद्दी वगैरह की गिनती रख परिमाण करना ।

१० विलेवण—जो वस्तु शरीर के चुपड़ने में आवे उसके विजन का प्रमाण । उदाहरण—सूखा चन्दन, केशर, तैल, सोडा, मसाला, कपूर, कस्तूरी, रोली, काजल, सुरमा वगैरह ।

११ बंभ—ब्रह्मचर्य का नियम करना, स्त्री पुरुष से सूई डोरे के न्याय श्रावक परदारा त्याग और स्वदारा से ही संतोष रखे, उसका भी प्रमाण करे ।

१२ दिशि—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नीची और ऊँची इन छः दिशाओं में जाने आने का कोस......प्रमाण त्याग करना। चिट्ठी, तार, आदमी माल......कोस, भेजना तथा मगाने का प्रमाण करना।

१३ न्हाण—सर्वाङ्ग स्नान की गिनती तथा पानी का वजन बांधना।

१४ भत्त—भोजन तथा पानी काम में लाना उसका प्रमाण करना इतने घर उपरान्त जीमना तथा पानी पीना नहीं।

(९) और भी हरदम जहाँ तक बन सके उपयोग पूर्वक समय व क्षेत्र की मर्यादा पूर्वक पाँच आश्रव द्वार सेवन के त्याग की आदत रक्खे।

(१०) साधु सतियाँजी से तथा सामायक पौषध वाले से बात करते समय अयतना से याने उघाड़े मुँह बोलने का त्याग करे।

इग्यारहवाँ पौषध व्रत

अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा अथवा अन्य कोई तिथि के दिन चारों प्रकार आहार त्याग कर अर्थात् चौविहार उपवास करके, अब्रह्मचर्य्य को छोड़ कर, स्नान, विलेपन, सुगंध माला, गहना आदि को छोड़ कर, अस्त्र शस्त्र को त्याग कर, समस्त दोष से निर्वृत्त होकर अष्ट प्रहर अथवा कम से कम चतुः प्रहर तक धर्म ध्यान में विताना पौषध व्रत का स्वरूप है। चौविहार उपवास विना पौषध नहीं होता। तिविहार उपवास करके जो आठ प्रहर अथवा तदोधिक समय धर्म ध्यान में ठीक पौषध के अनुकरण से विताया जाता है, वह देशावकाशिक व्रत में शुमार होता है। पौषध लेते समय व सायं प्रातः उपकरण की प्रति लेखना करनी पड़ती है। जितनी भूमि में रहना सोना पड़ता है उसे प्रमार्जन करना व लघुनीत बड़ी नीत की जगह पहले से जीव जन्तु विरहित देखकर रखनी पड़ती है। सामायिक की तरह जयना

सहित बोलना चलना पड़ता है। सवंत्सरी के दिन तो यथा संभव अष्टप्रहरी पौषध अवश्य कर्तव्य ही है। पौषध व्रत उसी दिन हो सकता है जिस दिन उपवास किया हो। इसलिये उपवास के दिन पौषध व्रत के महालाभ से वंचित रहना उचित नहीं।

साल में अष्ट प्रहरी पौषध......व चौपहरी पौषध......कमसे कम अवश्य करूँगा। सुखे समाधे।

बारहवाँ अतिथि संविभाग व्रत

(१) शुद्ध साधु को जानकर असूजती वस्तु न बहराऊँगा।

(२) प्रत्यह साधु की भावना भाऊँगा।

(३) छती शक्ति शुद्ध साधु को अशन पाण, खादिम, स्वादिम, पाढ़िहार, पीठ, फलग, सेज्झा, संथारा, औषध, भेषज, वस्त्र पायपुच्छना पात्रादि १४ प्रकार की वस्तु कल्पती देने की हरदम भावना रखनी चाहिए।

(४) साधुओं को हमेशा शुद्ध दान देने की भावना रखना ही प्रत्येक श्रावक श्राविका का कर्तव्य है। अस्तु, किसी प्रकार का भाव भेलकर साधुओं को दान देने का कार्य कदापि नहीं करना चाहिये। साधुओं के निमित्त कोई वस्तु बनाना तथा अपने लिये बनाई जाने वाली वस्तु में साधुओं के निमित्त कुछ अधिक बना लेना आदि आदि कार्यों द्वारा अशुद्ध दान देने से व्रतधारी श्रावक श्राविकाओं को हमेशा दूर रहना चाहिये। शुद्ध दान से सद्गति और अशुद्ध दान से दुर्गति प्राप्त होती है।

गाँव में साधु सतियांजी विराजते हों तो उनके

गोचरी उठने के पहिले भोजन नहीं करने का नियम करे।

भोजन करने बैठते समय कुछ देर साधुओं की प्रतीक्षा करने की आदत डाले।

संलेखना व उनके अतिचार

श्रावक अपनी शारीरिक अशक्तता के कारण जब अवश्य कर्तव्य धार्मिक अनुष्ठान करने में असमर्थ हो जाता है तब शरीर व कषायों को क्षीण करने के लिये जो शुद्ध वैराग्य भाव से आहारादिक का त्याग करता है, वह मारणांतिक संलेखना कही जाती है। इसके दो भेद हैं—एक द्रव्य संलेखना दूसरा भाव संलेखना। आहारादिक का त्याग करके समस्त विषयों के उन्माद के मूल भूत शरीर के सप्तधातुओं का शोषण करना, द्रव्य संलेखना कहलाता है। राग द्वेष कषायों को घटाना भाव संलेखना कहलाता है। इसी तरह कषायों को घटाने के लिये शरीर के समस्त मोह तथा आहार पानी का त्याग साधु व गृहस्थ दोनों के लिये विधान जैन शास्त्रों में है। इसे कोई अपघात न समझें। क्योंकि संलेखना का जो पाँच अतिचार बतलाया गया उससे इसका भाव स्पष्ट होता है। संलेखना का अतिचार यह है :—(१) इह लोक की किसी प्रकार की आशा वांछा से करना (२) परलोक की किसी प्रकार की आशा वांछा से करना (३) दीर्घकाल जीवित रहने की आशा से (४) मृत्यु कामना से (५) काम भोग की वांछा से। उक्त पाँच प्रकार अथवा उनमें से किसी भी प्रकार की आकांक्षा से यदि आहार पानी में त्याग किया जाय तो संलेखना में दोष लगता है। इससे स्पष्ट है कि आत्म शुद्धि के निमित्त भाव प्राण के विकाश के लिये—द्रव्य प्राण का न्योछावर एक अपूर्व वीरत्व का सूचक है। आत्मा का साध्य शाश्वत सुख शान्ति है। सुख का साधन धर्म और धर्म का साधन

शरीर है। जब शरीर धर्म का बाधक हो जाय तब शरीर का त्याग करके धर्म की रक्षा करनी उचित है। इसलिये संलेखना में उपरोक्त पाँच अतिचार बिलकुल न लगाना चाहिए।

अठारह पापस्थानक।

ऊपर में बारह व्रत विस्तृत रूप से बतलाये गये हैं। अब श्रावकों की जानकारी के लिये १८ पापस्थानक का संक्षिप्त वर्णन करते हैं—

१—प्राणातिपात—(इसके सम्बन्ध में पहले व्रत में लिखा ही है)

२—मृषावाद—(इसके सम्बन्ध में द्वितीय व्रत में लिखा है)

३—अदत्तादान—(इसके सम्बन्ध में तृतीय व्रत में लिखा है)

४—मैथुन—(इसके सम्बन्ध में चतुर्थ व्रत में लिखा है)

५—परिग्रह—(इसके सम्बन्ध में पंचम व्रत में लिखा है)

६—क्रोध
७—मान
८—माया
९—लोभ

} यह चार कषाय प्रत्येक श्रावक को यथा संभव घटाना चाहिए।

१०—राग—किसी भी जीव पर अत्यन्त मोह रखना।

११—द्वेष—किसी पर कलुषित भाव रखना।

१२—कलह—लड़ाई झगड़ा टंटा करना।

१३—अभ्याख्यान—दूसरे के सम्बन्ध में अयथार्थ बातें कहना।

१४—पैशुन्य—चुगली करना।

१५—परपरिवाद—दूसरे की निन्दा करना।

१६—रति अरति—असंयम में आनन्द और संयम में निरानंद भाव।

१७—मायामोसो—कपट सहित झूठ बोलना।

१८—मिथ्या दर्शण शल्य—देव गुरु व धर्म के सम्बन्ध में धारणा रखना।

उपरोक्त अठारह पापों से जहाँ तक हो सके बचे रहना

करण व योग

इस पुस्तक में जगह जगह व्रत धारण के समय १ करण १ योग, २ करण २ योग आदि का उल्लेख किया है। जिन्हें पच्चीस बोल आता है वे ३ करण ३ योग से बनने वाले ४६ भांगा अच्छी तरह जानते ही होंगे। परन्तु जिन्हें २५ बोल पूरे नहीं आते उनके सुभीते के लिये यहाँ बतला देना जरूरी है कि करण व योग क्या हैं।

योगः—किसी काम को करने के ३ साधन हो सकते हैं:—मन, वचन और काया। इन्हें योग कहते हैं। जैसे—किसी को मारने का मन किया तो मन योग प्रवर्ताया। अगर वचन से किसी को ललकारा कि तुमको मारूँगा तो वचन योग प्रवर्ताया। और हाथ पैर आदि से प्रहार किया तो काय योग प्रवर्ताया। इसलिये जब व्रत लेते समय १।२ या ३ योग से त्याग करने का इरादा हो तब यह विचार लें कि कौन २ से योग से व्रत निर्वाह कर सकेंगे।

करणः—करना, कराना व अनुमोदन करना—इन तीन तरीकों से काम किये जाते हैं। इन्हें तीन करण कहते हैं। जैसे—किसी को निज में मारना दूसरे से मरवाना व कोई मारता हो उसकी अनुमोदना व सराहना करना। व्रत लेते समय यह ध्यान में रखें कि कौनसे करण से व्रत निभ सकेगा। जैसे—१ करण १ योग या १ करण २ योग, १ करण ३ योग। २ करण १ योग, २ करण २ योग, २ करण ३ योग। ३ करण १ योग, ३ करण २ योग, ३ करण ३ योग। इन सब के मिलाने से ४६ भाँगे होते हैं। श्रावक के लिये ३ करण ३ योग से व्रत लेना शक्य नहीं। क्योंकि गृहस्थ के लिये अनुमोदन करना व मन पर वश रखना कठिन है। प्रत्येक श्रावक से अनुरोध है कि वे अपने सामर्थ्य अनुसार करण व योग से व्रत ग्रहण करें और उनके भांगों पर पूरा ध्यान रखें। हम नीचे इसका विस्तार करते हैं :—

करण	योग	योग	योग
१	१	२	३
(क) १ करूँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	
(ख) १ कराऊँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	
(ग) १ अनुमोदूँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	

करण	योग	योग	योग
२	१	२	३
(क) १ करूँ नहीं कराऊं नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	

(ख) १ करूँ नहीं अनुमोदूँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	
(ग) १ कराऊँ नहीं अनुमोदूँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
२ ,,	वचन से	मन से काया से	
३ ,,	काया से	वचन से काया से	
करण	योग	योग	योग
३	१	१	३
करूँ नहीं कराउं नहीं अनुमोदूँ नहीं	मन से	मन से वचन से	मन से वचन से काया से
,,	वचन से	मन से काया से	
,,	काया से	वचन से काया से	